हंसराज कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय

हंस

वार्षिक पत्रिका

2025

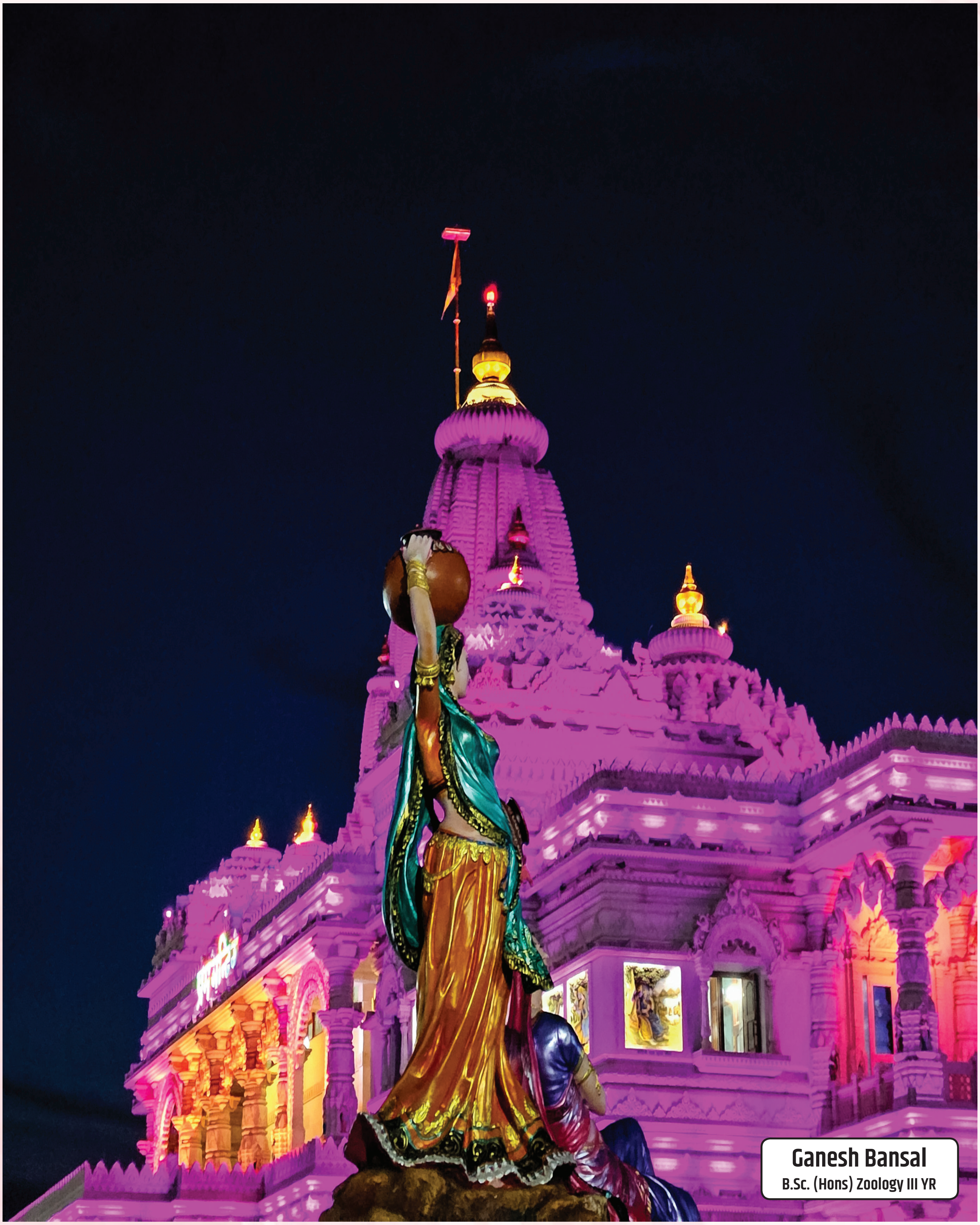

Ganesh Bansal
B.Sc. (Hons) Zoology III YR

ओइम्! विश्वानि देव सवितुर्दुरितानी परासुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव।।

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता,
समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप,
सब सुखों के दाता, परमेश्वर!
आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण,
दुर्व्यसन और दुखों को दूर कर दीजिए,
जो कल्याणकारक गुण,कर्म,
स्वभाव और पदार्थ हैं,
वे सब हमको प्राप्त कराइये।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

(1824–1883)

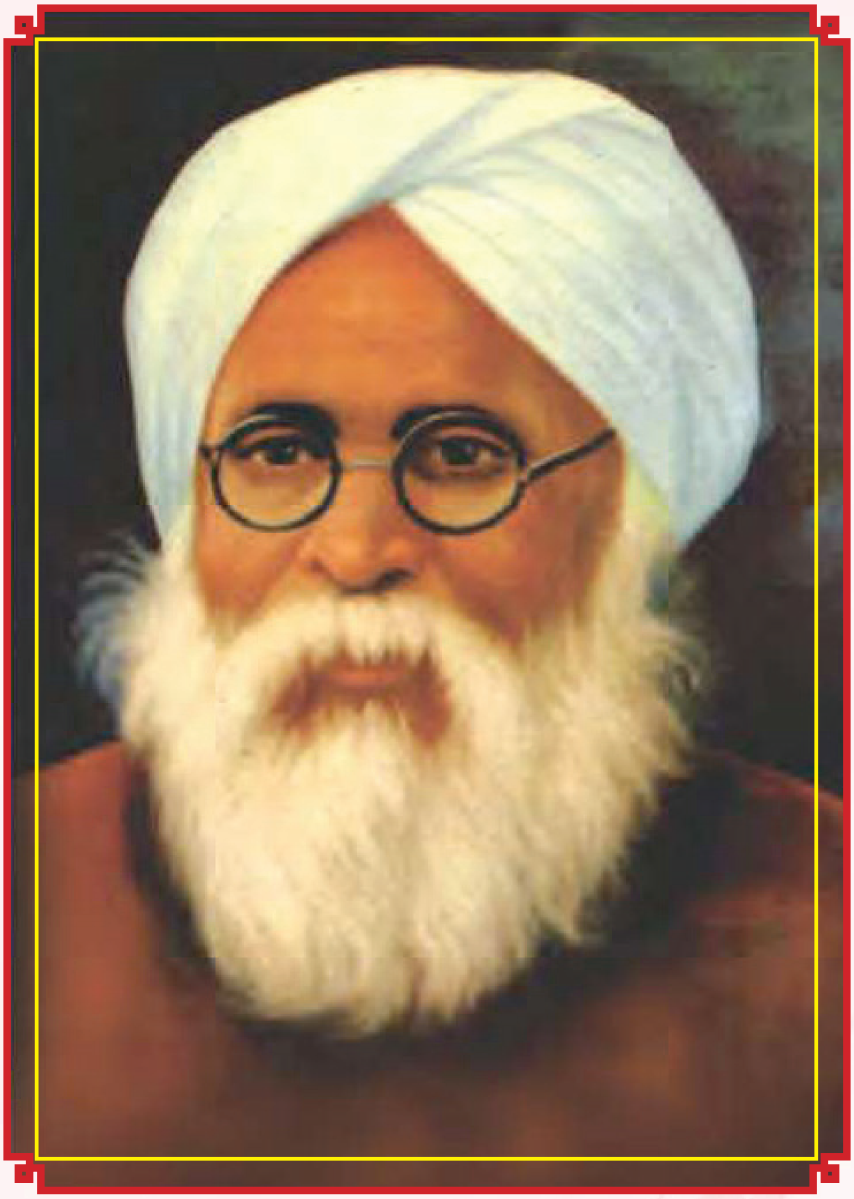

महात्मा हंसराज

(1864–1938)

प्रो. (डॉ.) रमा
प्राचार्या, हंसराज कॉलेज

हंसराज कॉलेज ने अपनी गरिमामयी यात्रा के 77 वर्ष पूर्ण कर लिए हैं। कॉलेज निरंतर विद्यार्थियों की रचनात्मकता को दिशा देने के लिए प्रयासरत रहा है। इस सन्दर्भ में अनेक प्रकार की गतिविधियों एवं प्रतियोगिताओं आदि के आयोजन से विद्यार्थियों को अभिव्यक्ति का मंच प्रदान किया जाता रहा है। हंसराज कॉलेज की रचनात्मक परंपरा का एक महत्वपूर्ण पक्ष इसकी वार्षिक पत्रिका 'हंस; भी है। 'हंस' एक बहुभाषी पत्रिका है। हिंदी, अंग्रेज़ी और संस्कृत भाषाओं की रचनाएँ इसमें प्रकाशित की जाती हैं। साहित्य की विविध विधाओं कविता, कहानी, लेख, संस्मरण आदि के माध्यम से हंसराज कॉलेज परिवार के सदस्यों की रचनात्मकता को प्रकाशित कर उनकी साहित्यिक प्रतिभा को सामने लाने की दृष्टि से यह बेहद महत्त्वपूर्ण है। हंसराज कॉलेज की अब तक की यात्रा में 'हंस' निरतंर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। यह कॉलेज के युवा विद्यार्थियों के साथ ही रचनात्मक लेखन में रूचि रखने वाले प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों के लिए भी एक विशेष मंच है। इसमें छात्र और प्राध्यापक दोनों की रचनात्मकता एक साथ उद्घाटित होती है। इसके माध्यम से लेखन के क्षेत्र में नए लोगों को एक बेहतरीन मंच तो मिलता ही है साथ ही निरंतर लेखन की प्रेरणा और प्रोत्साहन भी मिलता है। विद्यार्थी जीवन में कॉलेज की पत्रिका में अपनी रचनाओं के प्रकाशन से जो विशेष आनंद प्राप्त होता है उसकी अनुभूति प्रायः हम सबको है।

हंसराज कॉलेज की पत्रिका में प्रकाशित होने वाले अनेक विद्यार्थी आगे चलकर साहित्य, सिनेमा, मीडिया, कला आदि क्षेत्रों में अपना विशिष्ट मुकाम हासिल करते रहे हैं। ये सभी आज अलग-अलग क्षेत्रों में जिस तरह सफलता की चोटी पर खड़े हैं उसमें हंसराज कॉलेज और 'हंस' पत्रिका में उनकी रचनात्मकता के प्रकाशन का विशेष योगदान है।

कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'हंस' इस वर्ष का अंक आपके सामने है। इस अंक में परम्परागत स्वरुप और नए भावबोध से युक्त विशिष्ट रचनाओं को शामिल किया गया है। इसके साथ ही पेंटिंग आदि का भी सुंदर संयोजन किया गया है। इस अंक में प्रकाशित होने वाले विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों को मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। 'हंस' के इस अंक के संपादक मंडल को भी मैं हृदय से बधाई देती हूँ और सभी रचनाकारों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ।

डॉ. विजय कुमार मिश्र
संयोजक, प्रकाशन समिति

हंसराज कॉलेज की सुदीर्घ और गौरवशाली यात्रा में हमारी वार्षिक पत्रिका 'हंस' का विशिष्ट स्थान है। इसके माध्यम से देश-दुनिया के सम्बन्ध में हमारे विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं कर्मचारियों के अनुभव, दृष्टिकोण और संवेदनाएँ विविध साहित्यिक विधाओं के माध्यम से प्रकाशित होती रही हैं। उनकी भावनाओं, विचारों, रचनात्मकता आदि के प्रकटीकरण का एक बेहद शानदार मंच है 'हंस'। इसके माध्यम से समय-समय पर विद्यार्थियों के द्वारा बनाए गए चित्र आदि के माध्यम से भी उनके भाव को विस्तार मिला है। कक्षाओं की औपचारिक शिक्षा प्रणाली और नियमित पाठ्यक्रम के मध्य इस प्रकार की रचनात्मक गतिविधियाँ विद्यार्थियों के समग्र विकास की दृष्टि से बेहद महत्त्वपूर्ण सिद्ध होते हैं।

संपादक मंडल ने विद्यार्थियों की रचनात्मकता को कविता, कहानी, लेख, समीक्षा, चित्र, फ़ोटोग्राफ आदि के माध्यम से 'हंस' के इस अंक में आपके समक्ष प्रस्तुत किया है। इसमें प्रकशित हिंदी, अंग्रेजी एवं संस्कृत तीनों भाषाओं की रचनाएं हंसराज कॉलेज के विद्यार्थियों की भाषाई और रचनात्मक विविधता का द्योतक है। रचनाएं आमंत्रित करने से लेकर, उनके चयन, प्रूफ और संपादन आदि की दृष्टि से संपादक मंडल के सदस्यों ने जो श्रमसाध्य कार्य किया है, वह अभिनंदनीय है। 'हंस' का प्रकाशन हमारे संपादक मंडल के सदस्यों के साथ ही प्रशासनिक कर्मचारियों के सहयोग के बिना संभव नहीं था। ऐसे सभी लोगों का हृदय की गहराईयों से आभार।

कॉलेज की प्राचार्या प्रो. रमा ने हमेशा की तरह इस बार भी समुचित मार्गदर्शन और प्रोत्साहन से इस अंक को अंतिम रूप देने में बड़ी भूमिका निभाई है। इसके लिए प्राचार्या महोदया का विशेष धन्यवाद।

आशा है 'हंस' का यह अंक आप लोगों को पसंद आएगा और आपकी रचनात्मक संतुष्टि की दृष्टि से भी यह बेहद उपयोगी सिद्ध होगा।

ANKIT KUMAR
B.SC. LIFE SCIENCE, III YEAR

Name - Puneet Verma
Bsc(H) Anthropology

हिंदी खंड

संपादक

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी

डॉ. मनीष ओझा

छात्र- संपादक

विक्की कुमार

अक्षिता कौशिक

विषयानुक्रमणिका

1. दिनकर रहना सजग/ प्रतीक शर्मा ---- 10
2. सफ़र : रातों का/ मोहित तिवारी ---- 11
3. सत्यं शिवं सुन्दरम का सुमेल पुस्तकालय/ कुमार आदर्श "विवक्षुः" ---- 12
4. जिए जाते हैं/ साहिल सिंह ---- 12
5. मेरे प्रिय/ सिब्बू ---- 12
6. विश्वास का परिंदा/ नवनीत कुमार ---- 13
7. बंजारापन/ साहिल सिंह ---- 16
8. बेअंजाम हसरतें (रुबाइयाँ)/ अभिषेक द्विवेदी ---- 16
9. नाटक और जिंदगी/ नीरज कुमार साहू ---- 17
10. जज़्बात अल्फ़ाज़ों के मोहताज नहीं होते/ अभिषेक द्विवेदी ---- 17
11. स्त्री : मानवीय इतिहास की नीरव निर्मात्री/ शुभम आनंद ---- 18
12. स्पर्श/ सौरभ सिंह ---- 18
13. दोस्ती/ शायोन उपाध्याय ---- 19
14. रस्ता खुद मिल जाएगा/ अक्षिता कौशिक ---- 19
15. उलझन/ उत्कर्ष शुक्ला ---- 19
16. मैं और तुम/ अनुज मिश्रा ---- 20
17. कलम उठा मैं लिख चलूँ/ सलोनी भारती ---- 20
18. है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है/ सलोनी भारती ---- 21
19. औरत/ जेपी शर्मा ---- 21
20. दुश्मन/ जेपी शर्मा ---- 21
21. कविताएँ/ नवनीत सिंह लेखांश ---- 22
22. प्रत्यक्ष/ अप्रत्यक्ष नारी संघर्ष/ ख़ुशबू पाल ---- 24
23. अद्वैत/ सारांश मिश्रा ---- 25
24. एक जवाब ग़ालिब को/ लियाक़त अली ---- 25

दिनकर रहना सजग

प्रतीक शर्मा
बी. ए. हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

विपदा आन पड़ी है कैसी,
मन यूँ क्यूँ घबरा रहा?
चिराग भी है सहमा-सहमा,
क्यों तिमिर उसे भरमा रहा?

कोहरा घना छाया हुआ है,
सूर्य की स्वर्णिम आभा पर।
कौन करे अभिसिंचित प्रविधि,
सूख चुके निर्मल वट पर?

दिनकर, रहना सजग निशा में,
तुम सुखद सवेरा ले आना।
तिमिर चीर, तारण को पीर,
प्रज्ञा रथ पर चले आना।
जग के मीत, मेरे मन के गीत,
नव चेतना जग में भर जाना।
***
याद आ रहे क्षण वो सारे,
राजसभा जब मूक हो गई।
सत्ताधीशों, फिर कलयुग में,
द्वापर जैसी चूक हो गई।

द्रौपदी का चीर खिंच रहा,
द्रोपदी के राज में।
कुत्सित, कलुषित, कुचक्र चल रहे,
धर्म तेरे साम्राज्य में।

आकुल, व्याकुल, विवश द्रौपदी,
जीवित अभी दुःशासन है।
नेत्र निमीलित किए पुरोधा,
क्योंकि हत्याओं पर सिंहासन है।

पर,
काम, क्रोध, कंटक के पथ पर,
सुख-सुमन नहीं खिलते।
पाखंड, कुचक्र रचाने से,
पूजन के पुण्य नहीं मिलते।

शास्त्र पाठ बना रूढ़िवादी,
क्यों शास्त्र कर से छूट रहे?
शौर्य, साहस के प्रतिमान-प्रतिपल,
क्यों बिखर-बिखर कर टूट रहे?
राणा का पराक्रम भूल गए,
वीर शिवाजी को विस्मृत किया।
पातक मुगलों को याद रख,
पल-पल अपमान का घूँट पिया।

स्वर्ग, नरक सब इसी धरा पर,
जैसे को तैसा प्रतिफल है।
शुचिता, सत्य, विजय संवाहक,
कर्मों का परिणाम प्रबल हैं।
***
पग-पग पथ पर प्रश्न खड़े हैं,
राह कौन हरि जाऊँ मैं?
सकल सृष्टि के अजर सृजेता,
किस विध तुमको पाऊँ मैं?

व्याकुल मन का क्रंदन हरने,
चक्र सुदर्शन धारण कर।
परहित, पुण्य, प्रेम के पय को,
धर-अधर मुरली, मुरलीधर।

अरुणा प्रभा के मस्तक पर,
कविता के छंद चढ़ा जाना।
जिस क्षण तुम प्रस्थान करो,
नवरस, नवज्योति भर जाना।
दिनकर, रहना सजग निशा में,
तुम सुखद सवेरा ले आना।

सफ़र : रातों का

मोहित तिवारी
बी.ए. हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

चांद के बिना धनी बदलो सा
ये काली काली अंधेरी राते
मंद बहती ठंडी पवन और शांत सी दुनिया
लोगों से कहना चाहती है जैसे सौ बातें

दिन भर के काम से लौटने के बाद
कम थके तो खाकर और ज्यादा तो बिना खाए ही
सो जाते है लोग इस रात के साथ
बच्चे बूढ़े जवान अमीर गरीब सभी को
रात अपनी छांह में सुला लेती है
और लोग सो जाते हैं

लोग इस रात में अपने दिमाग को विश्राम देते हैं
बच्चा बड़े प्यार से इस रात का इंतजार करते हैं
संसार की यह सन्नाटे शांति रात का पहरा देखते है
और ये बादल सभी को नई ताज़गी देती है
बच्चे- बूढ़े, जवान इस रात में सभी सो जाते हैं
और यही रात का नियम है।
लेकिन क्या यह नियम सार्वत्रींक है?
नहीं!
नहीं! तो कौन तोड़ता है इस नियम को और किस लिए
नहीं जानते तो सुनो
एक माँ अपने पुत्र को सुलाने के लिए,
एक सैनिक अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए,
एक खिलाड़ी एक छोटे से पदक के लिए,
एक व्यापारी अपनी उन्नति के लिए,
एक किसान अच्छा अनाज के लिए,
एक किसान सबका पेट भरने के लिए,
एक चालक चीज़ो को गंतव्य स्थान तक पहुंचाने के लिए,
एक नर्स किसी परिवार की खुशी के लिए,
एक विरही किसी अपने को पाने के लिए,
एक प्रेमी प्रेमिका से बात करने के लिए,
एक चोर दूसरे के पेट काटने के लिए व अपने पेट के लिए
और न जाने कितने भूखे व बीमाऱ लोग
जो चैन की नींद लेना तो चाहते हैं
मगर कम्बख्क़्त नींद इन्हें रात नहीं देता।
ध्यान से सुनो,
इस सन्नाटी रातों मे भी कुछ
आवाज़ आ रही है,

किसी के पढ़ने की,
बैंड बाजे की,
वाहनों के चलने की,
गोलियों के चलने की,
किसी के दौड़ने की,
किसी कुत्ते के भौकने की और हाँ
किसी के रोने की

सब जगह कुछ न कुछ होते हि
और नहीं होते वहाँ
सभी बच्चे, बूढ़े और जवान को यह रात
अपनी छांह में सुला लेती
और लोग सो जाते हैं।

इस दुनिया के रंगमंच पर
सभी अपना किरदार निभाते हैं।
अच्छा किरदार कुछ छाप छोड़कर और फिर सभी एक दिन,
सदा के लिए सो जाते हैं।

सत्यं शिवं सुन्दरम का सुमेल पुस्तकालय

कुमार आदर्श "विवक्षुः"
बी.ए. संस्कृत (विशेष) तृतीय वर्ष

बुभुक्षा, पिपासा, द्वन्द्व, मानसिक व्यथा
पुस्तक दर्शन मात्र से मिट जाते हैं सर्वथा
हृदय की पीड़ा का एकमात्र औषधालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।१।।

पुरुष प्रकृति के योग से रचित यह सृष्टि
सृजन के तीन अधार द्रष्टा,दशर्न और दृष्टि
जगत् के जागरण का एकमात्र सृजनालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।२।।

उद्यानों के विकसित पुष्प संगुध है फैलाते
प्रातः काल खिलते, शाम होते ही मुरझाते
ज्ञानगंध से सुपोषित एकमात्र पुष्पालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।३।।

जीवन के द्वन्द्व, मन-बुद्धि के परस्पर युद्ध
मिलते हैं हमें यहाँ कृष्ण, शंकर और बुद्ध
आत्मा की जिज्ञासा का एकमात्र उत्तरालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।४।।

आत्मा की कराह जब नहीं सुनता संसार
ईश्वर बन पत्थर जब दिखते विवश, लाचार
निज क्रन्दन को कहने का एकमात्र देवालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।५।।

इन्द्रियों के भोग से क्या मिलता सुख अपार ?
नशा मुक्त होकर करता हर प्रातः विचार!
नित्य नशा कराने का एकमात्र मदिरालय
सत्यं शिवं सुन्दरं का सुमेल पुस्तकालय।।६।।

जिए जाते हैं

साहिल सिंह
बी.ए. अर्थशास्त्र (विशेष) तृतीय वर्ष

नादान बचपन की आसमानी ख़्वाहिशों की दुनिया छोड़,
अब इस बेहिस दिल की रिवायत-ए-बोझ ढोए जाते हैं।
फिर भी तंगहाली के हाल में, उम्मीद का दामन थाम,
अपने ज़िंदादिल परछाई की तलाश में खोए जाते हैं।
जब उड़े ख़ुद की तलाश में तो उलझनों की जकड़ में यूँ बँधे,
के बख़ूबी घायल हैं, फिर भी मंज़िल की ओर बढ़े जाते हैं।
इस बेतुके सफर में कमबख़्त ख़ुद से ही रंजिश कर बैठे,
वरना इक कब्रिस्तान में हयात के निशान भी कहाँ ढूँढे जाते हैं।
दिल के ज़ख्मों को झूठी हँसी के मुखौटे से छुपा,
दुनिया को अपनी ख़ुशी की फ़रेबी दास्ताँ सुनाते हैं।
बावजूद इसके गिरे जो एक भी अश्रु-रक्त लबों पर,
निगल चुपचाप उस भार को, अपना कारवाँ बढ़ाते हैं।
धधकते हुए अंतःअगन में फँसे तूफ़ान के मझधार,
बिना मरहम के झुलस कर नित हसरत किए जाते हैं।
अनंत काली सी होती ये घटाएँ सुनहरे सहर के इंतज़ार में,
फिर भी बस जिए जाते हैं, जिए जाते हैं, जिए जाते हैं।

मेरे प्रिय

सिब्बू
बी. ए. हिंदी (विशेष) द्वितीय वर्ष

मोहब्बत की है मैंने ऐसी
खुदा भी दूर न कर पाए।
अपने प्रिय के निधन पर
दुशाला ओढ़ हम अपना
जीवन महकाए।
उनकी याद में आंसुओं की नहीं
कलम की प्रलय लिए आए
उनकी यादों को धागों में पिरो
जीवन के सांसों को गिने जाए।
हो फना ये आस लिए
उनकी आत्मा से मिलन हो जाए।
मेरे प्रिय के पुनः दर्शन हो जाए।
पुनः दर्शन हो जाए।।

विश्वास का परिंदा

नवनीत कुमार
बी. ए. हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

"घायल तो यहां हर एक परिंदा है,
मगर जो फिर से उड़ सका वही जिंदा है।"

विद्या, कला, कविता, साहित्य, धन, राजस्व, ज्ञान, विज्ञान और आचार प्रचार से भी विश्वास की शक्ति अधिक ज्योतिष्मती है। विश्वास की शक्ति को प्राप्त एक कंगाल व्यक्ति भी जुगनू की भांति निशागन में भी अपनी पहचान बना सकता है। विश्वास की शक्ति को अपने रुह में उतार कर एक पंगु व्यक्ति भी तूफानों को धूल चटा कर भीमकायवान धराधरों पर अपनी विजय पताका फहरा सकता है। विश्वास की शक्ति को पहचान कर एक नेत्र विहीन व्यक्ति भी इस दुनिया में चंद्रकला निशा में मयंक की भांति अपना नाम बना सकता है। कर्ण विहीन व्यक्ति भी अपने हयात को एक परिंदे की भांति सफल बना सकता है।

विश्वास की भाषा मौन है। यह एक ऐसी भाषा है जिसमें शब्द नहीं है। विश्वास एक ऐसी कला है जो सभी कलाओं में सर्वश्रेष्ठ है। यह एक ऐसा विज्ञान है जो सभी विज्ञानों में श्रेष्ठतम है। यह एक ऐसा ज्ञान है जो सभी ज्ञानों में अद्वितीय है। विश्वास एक ऐसी अंतःशक्ति है जो सभी शक्तियों में अतुलनीय है। विश्वास का नाम लेते ही लेखक की लेखनी से शब्दों का राग निकलने लगता है। वक्ता की वाणी में विश्वास पैदा होने लगता है। चिड़ियों में कलरव होने लगता है तो तितलियों में भवरों के साथ खेलने की अभिलाषा पैदा होने लगती है। सूरज में नई ऊर्जा का जन्म होने लगता है तो मेघों में मुस्कान के परमाणुओं का संचार होने लगता है। मौसम में मानसून के साथ खेलने की नई ताजगी आने लगती है, तो सरोजों में कलियों की खिलखिलाहट मंडराने लगती है। समंदरो का सीना चौड़ा हो जाता है तो धराधरो का सिर गर्व से आसमां को सलामी देने लगता है। विश्वास का नाम लेते ही बड़ी-बड़ी मुसीबतें अपने आपको नीच दिखाकर अंधकार की भांति आलोक से पीछा छुड़ाकर भागने लगती है। विश्वास का प्रभाव मनुष्य के जीवन पर चिरस्थाई होता है और आत्मा का एक अंग बन जाता है। विश्वास की भाषा इतनी बलवती, इतनी महान और इतनी अर्थवती है कि दरिया को समंदर से कभी अलग ही नहीं किया जा सकता है। वह विश्वास ही है जिसने मछलियों को समंदर से दोस्ती करवाई। वह विश्वास ही था जिसने सुदामा जैसे भिखारी को कृष्ण जैसे राजराजेश्वर के उर (दिल) में जगह बनाने में मदद की। विश्वास पर किसी ने क्या खूब कहा है-

हर मुसीबत में मैं तेरे साथ हूं,
तूने मुझे पहचाना नहीं में, आत्मविश्वास हूं।'

आत्मविश्वास की भाषा भी शब्द रहित है। जीवन का सार भी शब्द से परे है। जीवन के अरण्य में धसे हुए पुरुष के ह्रदय पर प्रकृति और विश्वास का अद्वितीय प्रभाव पड़ता है। हमारे' मन' जैसे अद्वितीय' सुनार 'ने इस विश्वास को क्षण भर में ही नुकीले प्रस्तरों से भी अधिक धारदार बना देता है। हमारी वसुंधरा को कितना गर्व होता होगा जिसने करोड़ों वर्षों से मन में इस विश्वास को लेकर समंदरो के नीचे एक- एक पत्थर का एक- एक परमाणु डुबो- डुबोकर उसे विचित्र हथौड़े से सुडौल किया होगा तब कहीं बर्फ का आंचल ओढ़े हुए

हिमालय जो अति सुंदर, अति ऊंचा और अति गौरवान्वित मालूम होता है, के दर्शन हुए।

विश्वास तो द्विधारी तलवार से भी ज्यादा खतरनाक है। यह एक ऐसी भाषा है जिसके शब्द तो हाइड्रोजन बम से भी ज्यादा भयावह हैं। मध्य काल के एक कवि और युवराज अकबर के दरबार के नवरत्न कहे जाने वाले अब्दुर्रहीम खानखाना का एक प्रसिद्ध दोहा है-

"रहिमन जिह्वा बावरी कही गई सरग पताल
आपु तो कहीं भीतर रही जूती खात कपाल"

अर्थात् जीभ भी कैसी बावली है कि कुछ भी बोलकर खुद तो अंदर चली जाती है और जूतियां सिर पर पड़ने लगती है। यह शब्दों की मार बहुत तीक्ष्ण भी है और बहुत मीठी भी। यह मीठी और तीक्ष्ण हमारा विश्वास ही करता है। प्रसिद्ध शायर अकबर इलाहाबादी का एक कथन है कि-

"खींचो ना कमानो को न तलवार निकालो
जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो "

यानी तोप का मुकाबला तो केवल विश्वास के शब्द ही कर सकते हैं। विश्वास की चचेरी बहन आस्था है, जो ज्ञान के आधार के बिना किसी परिघटना के सत्य मानने का विश्वास है। विश्वास हमारे गात की वह ज्ञानेंद्रिय है जो सभी ज्ञानेंद्रियों में एकता रखते हुए भी सर्वोपरि है। विश्वास के अभाव में एक जीवित व्यक्ति भी मृत प्राणी का रूप ले लेता है। विश्वास के अभाव में हम अपने इस छोटे से मन में अगणित रंग-बिरंगे सपनों को पूर्ण करने में सफल नहीं हो सकते क्योंकि -

"उम्मीदें तैरती रहती हैं,
कश्तियां डूब जाती है,
कुछ घर सलामत रहते है,
आंधियां तब भी आती है,
बचा ले हर तूफान से उसे आश कहते है,
बड़ा मजबूत है ये धागा जिसे विश्वास कहते है।

जी हां जिसे आप पढ़ रहे है कि ये विश्वास बड़ा मजबूत धागा है इसका गवाह हमारा तवारीख है।" हर तलाश का अंत विजेता के सख़्त इम्तिहान के साथ होता है और रात का सबसे अंधेरा क्षण भोर होने के ठीक पहले होता है। "आइए मैं आपको ले चलता हूं उस सच्ची कहानी की ओर जिसमे विश्वास एक जीवन बन जाता है। जब चित्रकूट के अनजाने से घने जंगलों में मां सीता का हरण कर पापी रावण लंका ले जा रहा था तो मां सीता को बचाने के लिए जटायु को शक्ति विश्वास ने ही दी थी। विश्वास तो हनुमान में था जिसने मां सीता का पता लगाने के लिए सिंधुओं का सीना भी चीर दिया। मां सीता को भी विश्वास था कि इस चराचर जगत के पालन हारी राजराजेश्वर श्री राजा दशरथ के जेष्ठ पुत्र पुरूषोत्तम श्री राम यहां तक जरूर आएंगे और लंका का रावण सहित विनाश करेंगे। मैं विश्वास की दात तो वीरवर भगवान राम के शांतिदूत तथा बाली के पुत्र अंगद की देना चाहता हूं जिसने राक्षस लोक (लंका) में भरी महफिल में अपने पैर को जमा दिया और राक्षसकुंडली में किसी भी राक्षस की औकात न हुई की वह उसके पैर को हटा सके। विश्वास ने ही तो कलयुग में पड़े हुए कोयले को ख़ाक से उठाकर इस रंग बिरंगी सुनहरी दुनिया के फलक पर बैठा दिया है। विश्वास वह शिखी है जो हीरे जैसे पदार्थ को अपने गोद में बैठा कर उसे लक्ष्यमूल्य पदार्थ बना देती है। विश्वास तो उस वॉलीबॉल खिलाड़ी और धूल भरी गलियों से चलकर अपने हयात को निशाचल में हंस भांति दैदीप्यमय करने वाली पहली दिव्यांग पर्वतारोही अरुणिमा सिन्हा की है, जो एक पैर न होते हुए भी माउंट एवरेस्ट पर अपनी विजय पताका फहरा कर अपने नाम को तवरीख के पन्नों पर दर्ज करा दिया। विश्वास कभी शक्ल, उम्र, रंगरूप, अमीरी गरीबी या पैसे देखकर नहीं आता यह तो किसी चीज को पाने के लिए आने वाली मुसीबतों को मुकम्मल जवाब देने के लिए मन में आग लगने से आता है। आप उस' माउंटेन मैन' अर्थात् दशरथ मांझी के बारे में सोच सकते हैं, जिसके मन के कोरे पन्ने के किसी कोने में एक एक बूंद की भांति विश्वास का घड़ा भर रहा था। मन में विश्वास का एक जुनून था जिसके बल पर 22 सालों का अंतःस्तल की गहराइयों से स्वागत करते हुए उसने 110 मीटर लंबी श्रृंखला का सीना चीर कर एक रास्ते को ईजाद किया। वह पहाड़ मांझी से परास्त तो हो गया पर मांझी अपने आंखो की दरिया को रोक न पाया। कहते ही हैं कि-

तुम जीत कर भी रो पड़ोगे, कुछ इस कदर तुमसे हारेंगे हम।

विश्वास तो उस टेलीफोन के आविष्कारक एलेग्जेंडर ग्राहम बेल में था। आप सोच सकते है वह ग्राहम विश्वास का कितना धनी होगा। टेलीफोन को बनाने में उसने कितने ही तारों को इधर से उधर जोड़ा होगा। कितनी ही बार तो उसके विश्वास ने उसका नाम इतिहास के पन्नों में दर्ज करवाने के खिलाफ हो गए होंगे। मगर किसी ने सही ही कहा है कि-

'जमीर ज़िंदा रख कबीर जिंदा रख,
सुल्तान भी बन जा तो दिल में फ़क़ीर ज़िंदा रख,
हौसले के तरकश में कोशिश का वो तीर जिंदा रख,
हार जा चाहे जिंदगी में सबकुछ मगर फिर से जीतने की उम्मीद जिंदा रख।'

विश्वास और उम्मीद सगे सहोदर भाई ही है। बस अंतर इतना है कि रक्त में समानता होते हुए भी सोच में असमानता है। विश्वास करने वाला जिस पर विश्वास करता है उससे कुछ पाने की उम्मीद नहीं रखता, विश्वास में संतोष का भाव झलकता है तो वही उम्मीद में आश्रय और सहारे का। उदाहरण-जैसे अयोध्या नरेश पुरुषोत्तम श्री राम को वीरवर हनुमान और अंगद की वीरता पर विश्वास था तो वही उनकी भक्ति पर भरोसा।

1913 में साहित्य में नोबेल पुरस्कार विजेता गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर ने लिखा है कि " विश्वास वह पक्षी है जो प्रकाश अनुभव

करता है और तब गाता है जब भोर अभी भी अंधेरे में है।" विश्वास और जुनून परस्पर सगे संबंधी रिश्तेदार ही है। इनका आपस में वही संबंध है जिस तरह मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्य का आपस में संबंध है। अर्थात् दोनों में चोली दामन का साथ है। यही चोली दामन का साथ एकलव्य के मन में भी पनप रहा था जिसको मिटाने के लिए द्रोणाचार्य ने एड़ी चोटी का जोर लगा डाला लेकिन मिटा ना सका क्योंकि दीप्ति को कभी प्रकाश से अलग ही नहीं किया जा सकता है। ऊपर वर्णित मौलिक कर्तव्य और अधिकारों अर्थात् भारतीय संविधान को अपने रक्त की एक-एक बूंद के एक-एक परमाणु की स्याही से लिखने वाले बाबा साहब (BR AMBEDKAR) में भी जुनून और विश्वास की अतुलनीय क्षमता थी, जिसके बल पर उन्होंने भारत का नाम अंधकार के गर्त से उठाकर आलोक के विश्व मंच पर रख दिया। विश्वास तो हर एक परिंदे में होता है लेकिन किसी में ज्यादा तो किसी में कम और यही विश्वास हिंदुस्तान के असली नायक' मेजर कुलदीप सिंह चांदपुरी में था जिसने सन 1971 की लड़ाई में अनजानी रात में 120 सैनिकों की टुकड़ी के साथ 6000 पाकिस्तानी सैनिकों की टुकड़ी का सामना करने के लिए राजस्थान के लोंगेवाला (जिला-जैसलमेर) पहुंचा। विश्वास ने ही अब्दुल हमीद (भारतीय सैनिक गाजीपुर) को देशनायक बना दिया। विश्वास तो इंसान की सोच में होता है जैसी सोच होगी विश्वास वैसा ही होगा। विश्वास तो कच्ची मिट्टी के समान है जिससे आप मंदिर बनाये या मस्जिद। यह आपके ऊपर निर्भर करता है कि आप एक आधी भरी बोतल को आधी भरी बोतल कहे या आधी खाली बोतल।

मारिया स्नाइडर कहती है कि भरोसा करना कठिन है, यह जानना कौन भरोसा करने लायक है और भी कठिन है। * बालसखा में चित्रकार बनने की अभिलाषा को लेकर हिटलर ने इसी कच्ची मिट्टी को अपने मन में संजोकर रखा था, जिसके बल पर वह सन 1933 में जर्मनी का चांसलर और सन 1939 में जर्मनी का तानाशाह बना। वह विश्वास ही था जिसके बल पर सिकंदर (मकदूनिया यूनान का राजा) ने पूरी दुनिया को जीतने का मन बनाया था। विश्वास मन की वह शक्ति है जो बिना हथियार उठाए बड़े-बड़े धराधरो को घायल कर सकता है। गांधी जिसे राष्ट्रवादी नायक की उपाधि दी जा सकती है के मन में विश्वास का अथाह समंदर था जिसके बल पर उसने विस्तारवादी अंग्रेजों को धूल चटाकर पुनः लौटने के लिए विवश कर दिया। और यही विश्वास का अथाह समंदर राजपूतों के शेर अर्थात् मेवाड़ केसरी राणा प्रताप में उबाल मार रहा था। आप तवारीख के पन्नो में दर्ज हल्दीघाटी के युद्ध (18जून 1576) से जरूर रूबरू होंगे। यह वही लड़ाई थी जिसमे राणा ने विश्वास के बल पर अपनी छोटी फौज के साथ अकबर (मुगल शासक) की विराट सेना का दिलोजान से सामना किया। आइए मैं आपको ले चलता हूं गांव की उन पगडंडियों में जिसकी धूल भरी गलियों से चलकर हम और आप दिनकर की आरुषि (सूरज की पहली किरण) का हृदय की गहराइयों से स्वागत करते हुए स्कूल के आंगन में खगो की भांति मुस्कुराकर इन पंक्तियों को झूम - झूम कर पढ़ा करते थे-

सौभाग्य न सब दिन सोता है,
देखे आगे क्या होता है,
मानव जब जोर लगाता है,
पत्थर पानी बन जाता है।"

जी हां ये वह पंक्तियां हैं जिसे हम और आप स्कूल के आंगन में पढ़ा करते थे। ये वे पंक्तियां हैं जो मृत गगनचर (परिंदा) में भी जीवन की बूंदों को डाल देती है। ये पंक्तियां मानव में विश्वास का बखान कर रही है। यह ऐसा विश्वास है जो भीमकलेवरवान पहाड़ों के दिल को भी पिघला देता है। कहने का प्रयोजन है कि विश्वास से ही व्यक्ति में जीतने की उम्मीद पैदा होती है अर्थात् विश्वास ने ही इंसान को जीना सिखाया वरना इंसान सोच के किस गर्त में पड़ा था उसको खुद ही नहीं पता। प्रसिद्ध शायर अजहर फराज की एक लोकप्रिय शायरी है-

'दीवारें छोटी होती थी लेकिन पर्दा होता था, तालों की इजाज से पहले सिर्फ भरोसा होता था।

आज ताले तो बहुत बड़े हैं मगर लोगों के विश्वास बहुत छोटे हैं। विश्वास वह पेड़ है जो जलधिपाद से लेकर पहाड़ों की चोटियों तक तो रेगिस्तान की कटीली झाड़ियों से लेकर अनूप (ज्वारीय वन या डेल्टाई) वनों में भी अपने जीवन को प्रफुल्लित करता रहता है। विश्वास का पौधा कभी न मुरझाने वाला है। विश्वास हमेशा जिंदा था, है, और रहेगा। अंत में यही कहूंगा.......

** तुम सितारों के भरोसे पे न बैठे रहना,
अपनी तदबीर से तक़दीर तुम बनाते जाओ**।

बंजारापन

साहिल सिंह
बी.ए. अर्थशास्त्र (विशेष) तृतीय वर्ष

आज़ाद परिंदा हूँ तो फिर भी,
गुलाम आज़ादी का मैं।
पाँव टिके ना किसी डगर पर,
उस्ताद बंजारगी का मैं।
एक पल यहाँ, एक पल वहाँ,
मन से भी चंचल ये कदम।
बेफ़िक्र भटकता नित फिरूँ मैं,
अब सफ़र सदा मेरी सनम।
मैं नीलगगन का इक बादल,
कुछ आवारा सौदाई भी।
कोई रहबर साथ नहीं तो क्या,
सह लेता हूँ तन्हाई भी।
चल इस डगर से उस डगर,
एक मोड़ पर मैं भी रुका।
ठहराव की सर-ख़ुशी को देख,
बन बेकरार मैं भी झुका।
अब चैन की लूँ साँस मैं भी,
हो मन का बसने का विचार।
ओझल - सी ख़्वाहिश मेरे मन में,
ये जीवन हो फ़स्ल-ए-बहार।

बेअंजाम हसरतें (रुबाइयाँ)

अभिषेक द्विवेदी
बी.ए. हिंदी (विशेष) द्वितीय वर्ष

तेरी हर कमी क़ुबूल मुझे
ज़रा भी ध्यान न रहे उसूल मुझे
मैंने अपनी अमानत में संभाल रक्खा है
जो तूने प्यार से दिया था फूल मुझे

तेरी हँसी में कशिश कुछ अजब-सी है
हर लफ्ज़ तेरा बसीरत-तरब-सी है
देखने वालों को मालूम क्या
तेरी आँखों में चाहत लहब-सी है

जब चाँद तेरा दीदार करेगा
आँख मींज़ कई बार करेगा
दिल में चुभेगा फिर भी
अपनी खूबसूरती पर धिक्कार करेगा

तेरी यादों की चादर ओढ़े बैठा हूँ
अपने लफ़्ज़ों में खुदको तुझसे जोड़े बैठा हूँ
कभी लौट आना इसी मोड़ पर
अपने ख़्वाबों का दर खुला छोड़े बैठा हूँ

तेरे दर पर निगाहें जमीं रह गईं
ख़ामोशी लबों पर थमीं रह गईं
तू आयी नहीं, कोई शिकवा नहीं
बस आँखों में बेचैनी और नमी रह गईं

चाँदनी मेरे दामन पे पड़ती रही
रूह तन्हाइयों से धधकती रही
मैं जलता रहा चाँदनी के तले
और दुनिया इसे रात कहती रही

ख़्वाब जो देखे अधूरे रह गए
तेरी यादों के निशां पूरे रह गए
चाहकर भी तुझे पा न सके
कमबख़्त फासले दरमियां हमारे रह गए
तेरी महक का एहसास अब भी जारी है
दिल की धड़कन में हलचल भी भारी है
यादें समेट लीं हैं तेरी, मगर
इन आँखों में अब भी नमी सारी है

तू आयी नहीं कोई मसला नहीं
तेरी चाहत में अब वो ज़ज़्बा नहीं
जो दिल में था लफ़्ज़ों में ढल ना सका
अब अश्कों में बह जाए, बुरा भी नहीं

नाटक और जिंदगी

नीरज कुमार साहू
बी.ए. हिंदी (विशेष) तृतीय वर्ष

मेरे सारे किरदार जा रहे हैं
किसी कहानी के अंत की तरफ
जहाँ कोई और कहानी उनका इंतज़ार कर रही है।

जो मेरे किरदार है,
यानि इस कहानी में किराएदार है,
वो जा रहे हैं,
किराएदार हमेशा से जाने के लिए होते हैं
और ...
चले जाते हैं जब,
उन्हे किसी घर का ठिकाना मिल जाता हैं।
ठीक उसी तरह मेरे किरदार भी जा रहे हैं
इस ज़िन्दगी के नाटक के अंज़ाम की तरफ
जहाँ कोई और कहानीकार,
उनका इंतेज़ार कर रहा है
किसी चकोर की भाँति
वो इंतज़ार कर रहा है इस नाटक के खत्म होने का,
पर्दा गिरने का,
ताकि उसका नाटक जिसे कुछ लोग सुकून कहते हैं और कुछ मौत
एक अपरिचित... अनिश्चित ... अंतहीन आरंभ की ओर बढ़ सकें
जिसके आरम्भ का मतलब है
मेरा अंत।।

मेरे सारे किरदार लगभग जा चुके हैं
मैं अपनी देह के पास बैठा हूँ
और अब पर्दा गिरने वाला है।।

जज़्बात अल्फ़ाज़ों के मोहताज नहीं होते

अभिषेक द्विवेदी
बी.ए. हिंदी (विशेष) द्वितीय वर्ष

जज़्बातों का भी क्या कहना, ये कभी बयान नहीं होते
ये तो वो खामोशियाँ हैं, जो लफ़्ज़ों में बयाँ नहीं होते।

दिल की गहराइयों में छुपे अरमान होते हैं
हर धड़कन में बसी एक जुस्तजू के निशान होते हैं।

जब आंसू बहते हैं, रूह तक भीग जाती है
मुस्कराहट की ओट में छुपी उदासी भी निकल आती है।

ये जज़्बात वो नग़में हैं, जो बिना सुर के गाए जाते हैं
आँखों की चुप्पियों में, दिल की सदाएं समाए जाते हैं।

इश्क़ का रंग, हुस्न की अदा में नज़र आता है
दिल का दर्द, नज़्मों की सदा में बसर पाता है।

तन्हाईयों में भी गुफ़्तगू कर लेते हैं
ख़्वाबों में बसी हकीकतें बयाँ कर देते हैं।

जज़्बातों की ये दुनिया हैं, बस महसूस करने की
लफ़्ज़ों की तासीर नहीं, दिल से समझने की।

हर एहसास की अपनी एक कशिश होती है
और हर ख्वाब की अपनी एक तिश्नगी।

जज़्बात अल्फ़ाज़ों के मोहताज नहीं होते
ये दिल से दिल तक पहुंचते, कभी नाशाद नहीं होते।

स्त्री : मानवीय इतिहास की नीरव निर्मात्री

शुभम आनंद
बी.ए. (प्रोग्राम) तृतीय वर्ष

इस पृथ्वी पर मानव की उत्पत्ति कैसे हुई ? इस गूढ़ प्रश्न को हर धार्मिक समुदाय ने अपने तर्क, विचार और मान्यता के आधार पर उत्तर देने का प्रयास किया है।हिंदू धर्म की मान्यताओं के अनुसार प्रथम पुरुष मनु और प्रथम स्त्री शतरूपा के संयोग से मानव जाति अस्तित्व में आई।ईसाई, इस्लाम और यहूदी धर्म का संयुक्त मत है कि एडम और ईव के संयोग से मानव जाति की उत्पत्ति हुई।इस प्रकार हम देखते हैं इन मान्यताओं में इस तथ्य की तुल्यता है कि मानव की सृष्टि में पुरुष और स्त्री दोनों की सहभागिता है। तो अब प्रश्न यह उठता है कि सृजन काल से वर्तमान कालावधिपर्यंत ऐसी कौन सी घटनाएं हुई जिससे मानव जाति की जननी मानवीय समाज में ही हाशिये पर चली गई ? यदि हम इतिहास को खंगालें तो पाएंगे कि नारियों की आज-सी कुस्थिति हर दौर में नहीं थी।सिंधु घाटी सभ्यता के बाद जब वैदिक काल अस्तित्व में आया तो उस दौर में महिलाओं के अधिकार पुरुषों के समतुल्य थे,उन्हें सभाओं में जाने और विचार रखने की स्वतंत्रता थी यहां तक कि उन्हें अपने पति स्वयं चुनने की आज़ादी थी लेकिन उत्तर वैदिक काल आते - आते समाज का स्वरूप बिलकुल उलट चुका था और अब वह नारी सम्मान और अस्मिता की समाधि पर बना पितृसत्तात्मक रूप अख़्तियार कर चुका था। कालांतर में पितृसत्ता की जड़ें और पुष्ट होती गईं, वहीं नारी की निरंतर उपेक्षा उनकी नियति बन गई।लेकिन जलधारा पर भला कब तक चट्टानों का जोर चलता है, अंततः चट्टानों को रास्ता देना ही पड़ता है।

शतवर्षीय युद्ध (Hundred Years of War) की अग्नि में जब पूरा फ्रांस दग्ध हो गया था तब एक स्त्री ने ही आगे आकर अपने देश की प्रतिष्ठा की रक्षा की थी,अनेक प्रांतों और आपसी युद्ध में बँटे - बिखरे स्पेन को एक स्त्री ने ही एकसूत्र में पिरोकर अखंड स्पेन की नींव रखी थी, हमारे अपने देश में जब औपनिवेशिक सत्ता नग्न नाच कर रही थी, तब एक स्त्री ने ही राजमहल से युद्धस्थल में कूच कर अपनी आहुति देकर अपने देश की आबरु की रक्षा की थी।ऐसे उदाहरण अनगिनत हैं।

जब - जब समाज या देश पर संकट की बिजली कौंधी है,तब-तब महिलाओं ने हाथ के कंगन उतार असि धारण कर उसकी रक्षा में अपनी आहुति दी है।

पर समाज की स्मरण शक्ति बेहद क्षीण होती है,उसने अपनी नायिका और निर्मात्री को बड़ी तेज़ी से विस्मृत कर दिया है। पितृसत्ता की आंधी में आज उन निर्मात्रियों का स्वर नीरव-सा मालूम होता है।

स्पर्श

सौरभ सिंह, बी. ए. हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

जब भी स्पर्श शब्द का जिक्र, मेरे ज़हन में आता है, मुझे फ़ौरन तुम्हारा ख़्याल आता है

मेरे श्रृंगार का तुम प्रथम स्पर्श हो

मैं स्वयं भूतल तुम मेरी अर्श हो,

कभी महसूस किया है वह पहला स्पर्श, जब उंगलियां धीरे से छूती है, हड्डियों में झुरझुरी सी दौड़ जाती है। ऐसा लगता है मानो दुनियां थम सी गई हो, दिलों मे आतिशबाजी हो रही हो। फिर वो पहली झप्पी की गर्माहट, ये छोटे-छोटे लम्हे ही तो, हमारे साथ हमेशा रहते हैं। किसी खास का वो पहली छुअन, वो एहसास, जो रोमांचित करता है। दिल को भर देता है, जिंदा होने का एहसास दिलाता है, फिर वह पहला गर्म आलिंगन जहां वक़्त ठहर जाता है। एक स्पर्श के फुसफुसाहट में प्यार बहुत कुछ कह जाता है। जब स्पर्श शब्द दिमाग में आता है, तो सबसे पहले तुम्हारी याद आती है। तुम्हारा स्पर्श ... मेरे प्यार, मेरे आत्मा का पहला श्रृंगार है। वह कोमल ब्रश मुझे जगा देता है। तुम मेरे जमीन के लिए आसमान हो, जो अनंत तक फैला हुआ है। मुझे प्यार से थामे हुए है। तुम्हारे आलिंगन में मुझे अपना घर मिल जाता है। जहां शब्दों की जरूरत नहीं होती और सिर्फ दिल ही बात करता है। हर एक प्यार भरी छुअन, एक नाजुक स्पर्श मेरे अंदर एक संगीत जगा देता है। इन्हीं लम्हों में मुझे एहसास होता है, कि प्यार सिर्फ एक जज्बात नहीं है। यह दो प्रेम करने वाली आत्माओं का एक खूबसूरत नृत्य है।

दोस्ती

शायोन उपाध्याय, बी.ए. अर्थशास्त्र (विशेष) तृतीय वर्ष

यूँ साथ चलने का नाम है दोस्ती,
और रूठकर, फिर मुस्कुराना भी है दोस्ती।
इस दोस्ती को निभाना, यूँ आसान तो नहीं,
मगर निभा लेना जिंदगी भर, उसी का नाम है दोस्ती।
पर ना जाने, हमसे क्या खता हुई,
यार तुम हमसे रूठे, ना जाने ऐसी क्या बात हुई?
पहले जिससे दूर ना रहते थे तुम,
बिछड़ने की ना जाने, फिर यह क्यूँ आज बात चली?
जिंदगी के इस मोड़ पर,
ए दोस्त मुझे तुम याद रखना।
मिलना नसीब हुआ कहीं-किसी मोड़ पर अगर,
उस रस्ते पर तुम बस मेरा इंतज़ार करना।
वक़्त का खेल यूं चला है,
जो था कभी आज, वो आज कल जैसा लगता है।
हाथ पकड़ के चलाया जिन्हें,
आज यादों के सफर में उन्हें ही रुलाया है।
मौका मिले ना मिले, फिर कहीं मिलने का,
यही आखिरी मौका है, दोबारा हंसने और मुस्कुराने का।

रस्ता खुद मिल जाएगा

अक्षिता कौशिक, बी. ए. हिंदी (विशेष) द्वितीय वर्ष

शुरू से शुरू करने में
मन तेरा विद्रोह दिखाएगा
पर तू हिम्मत बांधे चलता रह
रास्ता खुद मिल जाएगा..

भटकेगा भी चित्त ये तेरा
मिटाने लगेगा घेरा तेरा
पैर थकेंगे, आँख दुखेगी
धड़कन में दिल खो जाएगा
पर तू हिम्मत बांधे चलता रह
रास्ता खुद मिल जाएगा..

बोलेंगे सब वाणी अपनी
मनवाना चाहेंगे कहानी अपनी
हो सकता है तू थक जाएगा
अपनी बात किसी से कह नहीं पाएगा
पर तू हिम्मत बांधे चलता रह
रास्ता खुद मिल जाएगा..

रात का घनघोर अंधेरा
पथ से तुझे डिगाएगा
फिर दूर थके उस राहगीर को
ध्रुवतारा दिख जाएगा
बस तू हिम्मत बांधे चलता रह
रास्ता खुद मिल जाएगा..

उलझन

उत्कर्ष शुक्ला, बी.ए. हिंदी (विशेष) तृतीय वर्ष

तुम्हें याद है जब मैं मिला
या भूल गए कब मैं मिला?

याद तो ना हो लेकिन मेरी बात तो होती होगी
बात तो ना सही मेरी यादों की किताब तो होती होगी?

चलो माना भूल गए
पर भूलने का एहसास तो होगा?

क्या जिन्दगी गुजार दोगी मेरे बिना
ऐसा क्या खास होगा जो मुझसे बढ़कर तुम्हारे पास होगा ?

क्या तुम मुझे इतनी आसानी से भूल जाओगी
क्या फिर से कभी साथ रहने की कसमें खाओगी?

क्या फिर से कहीं कभी हमारी बात होगी
क्या फिर से कहीं हमारी मुलाकात होगी?

चलो मुझे याद ना सही, बात तो करो
बात ना सही मुलाकात तो करो
हो सकता है तुमसे जो
कम से कम वो प्रयास तो करो।

मैं और तुम

अनुज मिश्रा
बी.ए. हिंदी (विशेष) तृतीय वर्ष

मैं आकाश, तुम विहग बनो,
मैं चंद्र, किरण तुम बन जाओ...
पूरे जग में भानु सदृश,आभा अपनी तुम फैलाओ।

मैं नयन बनू, तुम अश्रु बनो,
मैं शरीर, प्राण तुम बन जाओ...
मेरे हिय में बसने वाली, स्पंदन हर क्षण की बन जाओ।

मैं तुषार, तुम धरा बनो,
मैं पुहुप, सुवास तुम बन जाओ...
मन मन्दिर में रमने वाली,देवी की मूरत बन जाओ।

मैं सावन, तुम काली घटा बनो,
मैं बारिश, तुम बूंदे बन जाओ...
मेरे जीवन के पतझड़ में, हरियाली बन के आ जाओ।

मैं शैल बनू, तुम स्रोत बनो,
मैं सागर, तुम लहरें बन जाओ...
इंद्रधनुष के रंगों सम, सतरंगी तुम बन जाओ।

मैं शब्द बनू, तुम अर्थ बनो,
मैं तम, प्रकाश तुम बन जाओ...
इस निर्जन पथ में संग चलकर, साथी मेरी बन जाओ।

मैं कहा करूं, तुम सुना करो,
मैं ना समझूं, तुम समझाओ...
पग- पग में उत्तम मित्र सदृश, त्रुटियों को मेरे बतलाओ।

कलम उठा मैं लिख चलूँ

सलोनी भारती
बी. ए. अंग्रेज़ी (विशेष) तृतीय वर्ष

शोरगुल के अंतराल जब मौन हृदय रक्त हो
खिन्न होती मनोदशा पर मुखस्मिता सशक्त हो
घुट-घुट के अंदर मैं क्यूँ ऐसे बिलख चलूँ?
कलम उठा मैं लिख चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ....

उजाड़ कर बिगाड़ कर जो पहिया एक प्राण का
उठूं मैं ज़ोर डाल कर जो दांव लगा मान का
मैं जीत हूँ मैं हार के क्यूँ हाथ ऐसे बिक चलूँ?
कलम उठा मैं लिख चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ....

नेत्रनीर शुष्क हैं अब नहीं विवाद भाव से
घोषणा ये कर दूं मैं विश्वास के प्रभाव से
के शक्तिहीन ना समझ मैं नंगे पाँव टिक चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ....

तुम बाँध दो मैं ना रुकूँ, तुम रौंद दो मैं ना थकूँ
लक्ष्य प्राप्ति पहले तक मैं रोक ना कदम सकूँ
भार सारा पृष्ठ पर उतार कर अडिग चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ
कलम उठा मैं लिख चलूँ....

है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

(हरिवंश राय बच्चन से प्रेरित)

सलोनी भारती
बी. ए. अंग्रेज़ी (विशेष) तृतीय वर्ष

कैसी ये शत्रुता हुई मानव मन के विश्वास से
रिक्त स्थान प्राण में रोशनी के आस से
माना के आशा ना बची देह दर्द से सना है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

जीवन का एक पहलू होगा जो ऐसी दशा लाएगा
विजयी भी खुद की योग्यता का प्रमाण दे ना पाएगा
गायेंगी ऋतुएँ किंतु भाव ऐसा के बादल घना है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

चित्त का विषाद जब रोके है स्वप्न दृष्टि को
खुद को सिद्ध कर सको ना इस समस्त सृष्टि को
तब भी अडिग तू रहना के बाकी अभी तो आसमाँ है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

जो जल रही अग्नि प्रचंड चक्षु में वो जलने दे
हृदय में हो जो शून्यता हृदय को तू सँभलने दे
पर छोड़ ना तू रास्ता के रास्ता अभी बना है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

चारों भुजाएं शक्तिहीन हो ना जाये जब तलक
चारों दिशाएँ बाधाओं से खो ना जाये जब तलक
तब तलक तू चलना क्यूँकी निद्राहीन आत्मा है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है

जो थम गए हों अश्रु तो, ऊँचा कपाल अब करो
शोक राग रोक कर, लहू उबाल अब करो
के वही है सीना ढाल सा, जो हार में भी त्यों तना है
है अँधेरी रात मगर, दीया जलाना कब मना है।

औरत

जेपी शर्मा
सुरक्षा प्रहरी,हंसराज महाविद्यालय

बनाना तुमको आता है, मिटाना तुमको आता है।
मैं हूं औरत जिंदगी को, सजाना हमको आता है।
कभी हूं मां, कहीं बेटी, पत्नी- पे्रमिका बहु सासू,
ननद -भाभी का भी रिश्ता, निभाना हमको आता है।
दुलार से भारी हूं मैं, प्यार से भारी हूं मैं,
जरूरत गर पड़े गुस्सा, दिखाना हमको आता है।
मैं हंसती हूं, हंसती हूं, मैं लोरी भी सुनाती हूं,
वक्त आने पर कभी आंसू, बहाना हमको आता है।
मैं सजती हूं, संवरती हूं, मैं दिल में भी उतरती हूं,
सिर्फ रूठना ही नहीं कभी, मानना हमको आता है।
मैं चूमती हूं मैं कदमों को, निभाती हूं मैं रस्मों को,
अपने रक्षाथ तलवार भी, उठाना हमको आता है।
मैं बापू की दुलारी हूं, हर खेल की खिलाड़ी हूं।
सीमाओं पर बंदूके भी, चलाना हमको आता है।
मैं अबला हूं तो सबला हूं, मैं हैरीस हूं तो सुनित हूं
अंतरिक्ष यान भी देखो, उड़ाना हमको आता है।

दुश्मन

कभी दुश्मन को दुश्मन का, सहारा बनते देखा है।
कभी मौजों को कश्ती ने, किनारा बनते देखा है।
जिन रिश्तों से रिसते थे, कभी खून के कतरे,
उन रिश्तों को फिर हमने, दूबारा बनते देखा है।
समझ बैठा जहाँ जिसको, उजड़ा एक चमन पहले,
लगा कुछ वक्त मगर उसको, नजारा बनते देखा है।
जहां के लोग भी जिनको, बहुत एहतराम करते थे,
धूल भरा जमीं उनका, गुजारा बनते देखा है।
जो पकड़ा नहीं खुद से, नब्ज वक्त का हरगिज़,
सरेआम जहाँ उसको, बेचारा बनते देखा है।
छोटे आगाज को आखिर, छोटा क्यूँ समझते हो,
कभी बड़े काम का उसको, इशारा बनते देखा है।
कभी कम नहीं समझो, बूझे शोले की भी औकात,
बूझे शोले को भी हमने, अंगारा बनते देखा है।
समझी थी जिसे दुनियां, रास्ते का कोई पत्थर,
आसमां का चमकता इक, सितारा बनते देखा है।

कविताएँ

नवनीत सिंह लेखांश
बी. ए. हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

आते जाते रस्तों पर मैंने

आते जाते रस्तों पर मैंने
खुरच तुम्हारा नाम लिखा है,
कभी सर्द की धूप लिखी,
कभी सुंदर शाम लिखा है,

मन की बातें मन ही जानें,
संघर्षों की रेखाएं हैं,
रेखाओं से पार है जाना,
जाना अंतिम बार लिखा है,

लिखा हुआ है श्वेत पृष्ठ पर,
भीतर का स्वीकार लिखा है।
बुझते दीपक जलते देखे,
देखे हमने सूरज को,
मुट्ठी में उसको कसकर हमने,
दिए का एक प्रकार लिखा है।

आते जाते रास्तों पर,
खुरच तुम्हारा नाम लिखा है,

हमने स्थिर नहीं लिखा है
लिखा है लौह दीवारों को
जो दीवारों सा तने हुए
वह हमने वीर जवान लिखा है।

आते जाते रस्तों पर,
खुरच तुम्हारा नाम लिखा है,

पेड़ पर रस्सी लटक रही है,
गले पर गहरा निशान दिखा है,
हाय हाय सब सरकारों को,
मैंने अमर किसान लिखा है।
मैंने मिथ्या नहीं लिखी,
नहीं लिखा आडंबर को,
मौसम बदला पतझड़ आया,
मैने तो अंजाम लिखा है।

मन उम्मीद की डोरी थामें,
हमको तुमको सब पहचाने,
मैंने अपनी कविताओं में,
सहज प्यार आराम लिखा है,

आते जाते रस्तों पर,
खुरच तुम्हारा नाम लिखा है,
कभी सर्द की धूप लिखी,
कभी सुंदर शाम लिखा है।

मेरा भारत मेरा परिचय

मैं भाषाओं में हिन्दी हूँ

माँ के सुहाग की बिंदी हूँ
मैं बहती पवित्र गंगा हूँ
आस्था की अनूठी संज्ञा हूँ
मैं ही शिव की काशी हूँ
पाषाणों की नक्काशी हूँ
जो है सबके अंतर्मन में
मैं उस भारत का वासी हूँ।

मैं सागर सा बहुत खार भी हूँ
नदियों की मीठी धार भी हूँ
मैं पूजित वृक्षों में पीपल हूँ
जल समान ही शीतल हूँ
मैं ग्रह-नक्षत्र का राशि हूँ
आपदा घोर विनाशी हूँ
जहाँ राम प्रभु सन्यासी थे
मैं उस भारत का वासी हैं।
मैं कुरूक्षेत्र का प्रहार भी

मुरलीधर का अवतार भी हूं
मैं युद्धों में बहा रक्त भी हूं
संसार से पूर्ण विरक्त भी हूँ
मैं भीष्म की कुंठ उदासी हूँ
कांति में चन्द्रमासी हूँ
जहाँ स्वयं बुद्ध ही जन्मे थे
मैं उस भारत का वासी हूँ।

मैं रत्न जड़ित हार भी हूँ
पुष्पों का अनेक प्रकार भी हूँ
मैं राणा का संसार भी हूँ
तलवार की तीव्र धार भी हूँ
मैं मुगलों का विनाशी हूँ
फहराता ध्वज आकाशी हूँ
जहाँ कृष्णा-भक्त थी मीराबाई
मैं उस भारत का वासी हूँ।

मैं प्रेम और सत्कार भी हूँ
गोरों से लुटा व्यापार भी हूँ
मैं सिंह भगत सा आँधी हूँ
सहज स्वभाव गाँधी हूँ
मैं स्वाधीनता की तलाशी हूँ
सहजता का अभिलाशी हूँ
जहाँ पत्तथर को भी पूजते हैं
मैं उस भारत का वासी हूँ।
मैं उस भारत कर वासी हूँ।

उनसठ पार

मेरे भीतर से खिसकती हुई जिंदगी,
थक चुकी सी मेरी आँखें
देख लेती हैं जब,
दादी के मुरझाए हुए चेहरे को,
दादा जी के कांपते हुए हाथों को,
सच में,
तब यही लगता है कि,
कुछ तो बहुत अजीब होने वाला है।
कुछ ऐसा जो सच है,
जिसे स्वीकारना!
जीवन के कठिनतम कार्यों में से एक है।

मैं चाहता हूं

मैं जब भी देखना चाहता हूं,
स्मृतियों के पार देखना चाहता हूं,
जिसके सहारे जीवन,
अतीत की सुंदरता में खोया रहता है।

मैं जब भी छूना चाहता हूं,
बर्फ़ के टीले को छूना चाहता हूं,
जिसको स्पर्श करते ही,
भीतर का सारा ताप खत्म होता है।

मैं जब भी कुछ खोना चाहता हूं,
खोई चीजों को वापस खोना चाहता हूं,
जिसको ढूंढने का क्रम,
मेरे जीवन में निरंतरता से चलती रहे।

मैं जब भी जुड़ना चाहता हूं,
नदी के पुल की तरह जुड़ना चाहता हूं,
जिसके जुड़ने से ही,
नदी के प्रवाह में बाधा नहीं उत्पन्न होती।

मैं जब भी दूर जाना चाहता हूं,
हमेशा खुद से बहुत दूर जाना चाहता हूं,
जिसके जाने मात्र से ही,
मेरा अस्तित्व धुंध की परत के नीचे आजाए।

मैं जब भी कहूं कि मैं चाहता हूं,
तुम मेरी उपेक्षा करना,
जब मैं कुछ नहीं चाहूंगा उस समय,
मैं सिर्फ़ तुम्हारा ही रह जाऊंगा।
मुझे तुम्हारा होना है।

प्रत्यक्ष / अप्रत्यक्ष नारी संघर्ष

ख़ुशबू पाल
बी.ए. हिंदी (विशेष) द्वितीय वर्ष

आज बैठे बैठे यूं ही ख्याल आया, उस मर्मज्ञ चित्रण का जिसपर नज़र तो सबकी है, परंतु ध्यान किसी का नहीं। अब आप कहेंगे की नज़र है पर ध्यान नहीं है, इसका क्या तात्पर्य है? कुछ क्षण रुको और स्वयं इस सवाल के जवाब की कल्पना करो। उम्मीद है आपके मन मे कोई तर्क अवश्य होगा। चलिए हम अपने तर्क से आपको रूबरू कराते है- नज़र होने और ध्यान देने में अंतर है, और मेरा प्रयास है कि मैं इस अंतर से आपको रूबरू करा सकूं।

नज़र और ध्यान में बारीक फर्क होता है- नज़र को हम नजरंदाज कर देते है, परंतु ध्यान को नहीं, अपितु ध्यान हमे उस ओर अधिक बल से आकर्षित करता है और उस पर हमारा ध्यान केंद्रित करता है।

नज़र में केवल जिक्र होता है, परंतु ध्यान में फिक्र होती है, नज़र में आकर्षण होता है, परंतु ध्यान आकर्षित करती है। नज़र हमे दिखाती है, परंतु ध्यान हमे सोचने को मजबूर करती है। उम्मीद करती हूं की ये मेरा छोटा सा प्रयास इस अंतर को स्पष्ट करने में सहायक होगा। अब इसकी स्पष्टता के बाद आपके मन में जिज्ञासा उत्तपन हो रही होगी की मर्मज्ञ चित्रण क्या है? जिसपर नज़र तो सबकी है परंतु ध्यान किसी का नहीं, तो चलिए अब इस वाकया से भी रूबरू होते हैं। इस विषय पर गंभीरता से चर्चा करने से पूर्व आपको एक संवेदनशील कविता से रूबरू कराते है:-

"पढ़ा गया हमको
जैसे पढ़ा जाता है कागज़
बच्चों की फटी कापियों का
चना जोर गर्म के लिफाफे बनाने के पहले!!
देखा गया हमको
जैसे कि कुफ्त हो उनीदे
देखी जाती है कलाई घड़ी
अलस्सुबह अलार्म बजने के बाद!!
सुना गया हमको
यों ही उड़ते मन से
जैसे सुने जाते हैं फिल्मी गाने
सस्ते कैसेटों पर
ठसाठस भरी हुई बस में!!
भोगा गया हमको
बहुत दूर के रिश्तेदारों के
दुख की तरह!!
एक दिन हमने कहा
हम भी इंसान है-
हमे कायदे से पढ़ो एक-एक अक्षर
जैसे पढ़ा होगा बी. ए. के बाद
नौकरी का पहला विज्ञापन!!
देखे तो ऐसे जैसे की
सिहरते हुए देखी जाती है
बहुत दूर जलती हुई आग!!
सुनो हमे अनहद की तरह
और समझों जैसे समझी जाती है
नई-नई सीखी हुई भाषा!!"

इस कविता को पढ़ने के उपरांत आपके मन में मर्मज्ञता का भाव उपजा जरूर होगा, परंतु सवाल ये है कि आपका इस मर्मज्ञता पर केवल नज़र है या ध्यान भी है?

इस कविता का शीर्षक है "स्त्रियां" और स्त्रियां ही हमारी मार्मिक चित्रण का विषय है। अब आप कहेंगे आज के समय में हम स्त्रियों के लिए इस मर्मज्ञ शब्द का प्रयोग करके उनकी सफलता और प्रतिष्ठा की अवहेलना कर रहे है, परंतु मेरे तर्क से यही तो चर्चा का विषय है, जिस पर हमे केवल नज़र की नहीं अपितु ध्यान देने की आवश्यकता है। ध्यान देने से हमारा तात्पर्य इस विषय पर गहनता से इसका विश्लेषण करना है।

इस सच्चाई से मुकरा नहीं जा सकता कि आज नारी अपने संघर्ष से अपने जीवन में सफलता का परिचम लहरा रही है, साथ ही साथ प्रत्येक क्षेत्र में अपनी प्रतिष्ठा सम्मानपूर्वक स्थापित कर रही है, जिसपर सबकी नज़र है और जिसकी चर्चा सबकी ज़ुबान पर है। परंतु मेरा सवाल है कि क्या किसी का ध्यान उनकी संघर्ष करते सफ़र, निजी जीवन से लेकर व्यवसायिक जीवन तक, रास्ते पर चलते हुए हर कदम पर उस अदृश्य भय से लड़ने पर, चारों तरफ की परेशानियों को झूठी मुस्कुराहट के पीछे छुपाने की कला पर, अपनी तकलीफों के आगे दूसरो के प्रति करुणा और संवेदना को प्राथमिकता देने पर, अंदर ही अंदर जीवन की कठिनाइयों से लड़ते हुए भी सामने आते ही सहसा मुस्कुरा देने पर, क्या कभी

कांटों भरे जीवन को फूलों का बिस्तर बनाते हुए किसी ने भी ध्यान दिया? क्या किसी ने ध्यान दिया उनके जीवन के मार्मिक स्थिति पर, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में उनके जीवन में व्याप्त है? आप स्वयं से सवाल करिए क्या आपकी नज़र उनकी सफलता पर है, या जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्यक्ष/ अप्रत्यक्ष रूप में करते संघर्ष पर आपका ध्यान है?

आज की नारी कहती है:-
मैं अबला नादान नहीं हूं
कोई दबी हुई पहचान नहीं हूं
स्वाभिमान से मैं जीती हूं
रखती मन में खुद्दारी हूं
मैं जन्मदायिनी नारी हूं!!

नारी का योगदान अथाह, असीमित है, जिसका उपयुक्त मापदंड नहीं है।

चंद पंक्तियाँ नारी के योगदान पर:-
कहा तक मैं लिखूं
नारी की कहानी को
कभी मोम बनती है
कभी ज्वाला धधकती है
कभी नदियों की धारा बनकर बहती है
कभी आसमान बनकर सारा संसार ढकती है!!
स्त्री
अपने एकांत में स्त्री होती है
बाकी समय
वह केवल संबंध होती है!!!

तो क्या आपका ध्यान नारीत्व की इस गहनता पर कभी केंद्रित हुआ? नारी केवल संबंध नहीं, भोग-विलास की वस्तु नहीं, करुणा का विषय मात्र नहीं, मज़ाक का पात्र नहीं, असभ्य निगाहों का शिकार नहीं, दानवों की संतुष्टि नहीं, अपितु वह तो श्रद्धा के समान, यशश्विनी, सहज एवम सूर्य के समान धधकती ज्वालामुखी की प्रतिमूर्ति है।

महाकवि जयशंकर प्रसाद जी ने अपने महाकाव्य "कामायनी" में नारी को कुछ इस प्रकार उद्धरित किया है:-

" नारी! तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास-रजत-नग पगतल में, पीयूष-स्त्रोत-सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में। देवों की विजय, दानवों की हारों का होता युद्ध रहा, संघर्ष सदा उर-अंतर में जीवित रह नित्य विरुद्ध रहा। आंसू से भीगे अंचल पर मन का सब कुछ रखना होगा, तुमको अपनी स्मित रेखा से यह संधि पत्र लिखना होगा!!"

अद्वैत

सारांश मिश्रा
बी. एस. सी., कम्प्यूटर साइन्स (विशेष) द्वितीय वर्ष

खड़ा हूँ चौक पर देखता हू सांझ मैं
एक तरफ हिरण्यगर्भ और एक तरफ हूं बांझ मैं
एक तरफ हर मोड़ पर डसती है नागिन जिन्दगी
एक तरफ हर और से काँटे चुभोती दिल्लगी
एक तरफ पाषण भेदी अहं का वो भाव है
एक तरफ एकांत से जन्मा वो एकल घाव है
एक तरफ मेरा जिरह और उसकी मुश्किलें
एक तरफ हूँ खुद ही मैं और मुझमें तुम मिले
एक तरफ मृगज समान कोमल चित कृपाल है
एक तरफ अग्निशिखा सा फैला माया जाल है
एक तरफ कपोल मन की कल्पना का सार है
एक तरफ प्रज्ञा और बुद्धि, कठोरता की धार है
एक तरफ व्योम को समेटने की शिद्दतें
एक तरफ धरा को धरने की है होती चाहतें
इस द्वैत के हर भेद को अभेद का एक अंश है
हर अंश को करने को पूर्ण हो रहा अद्वैत मैं

एक जवाब ग़ालिब को

लियाक़त अली
बी. ए. दर्शनशास्त्र (विशेष) प्रथम वर्ष

गर ठहरता थोड़ी देर, तो विसाल-ए-यार होता,
ना कोई हिज्र होता, ना दर्द का इज़हार होता।

तूने खुद अपने ही जज़्बात का रुख़ खोला है,
गर यक़ीं ना सही, तो क्या ही वफ़ादार होता।

ये तीर-ए-नीमकश की ख़लिश कहाँ ठहर पाती,
मेरा वादा था, कि फिर से वस्ल-ए-यार होता।

वसवासे तेरे अक़ीदे में यूँ गुमाँ रखते है,
समझता तू शफ़ीक़ों को, गर ऐतबार होता।

तूने तोड़ा मज़मून-ए-फलसफा-ए-मोहब्बत मेरा,
काश तेरा ये पैग़ाम, तुझी पे असरदार होता।

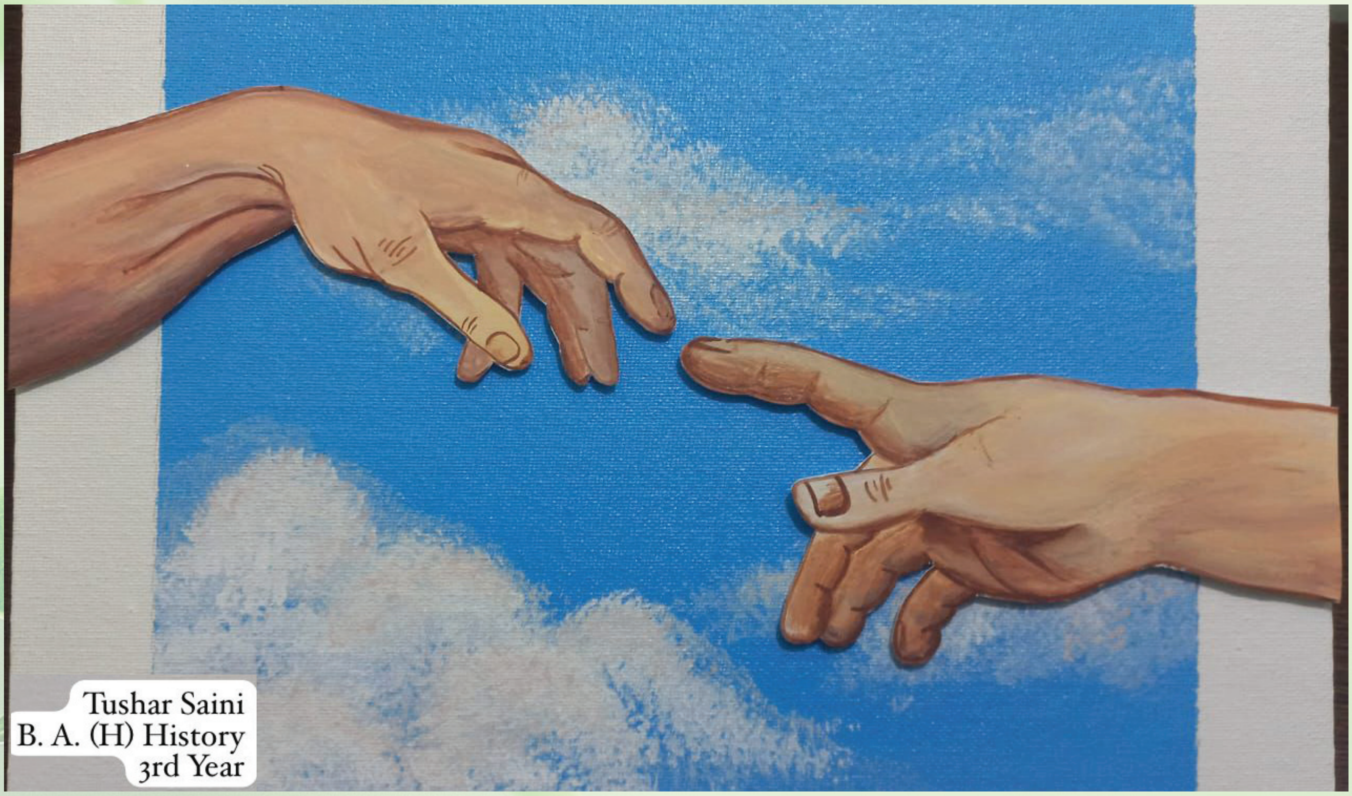

Tushar Saini
B. A. (H) History
3rd Year

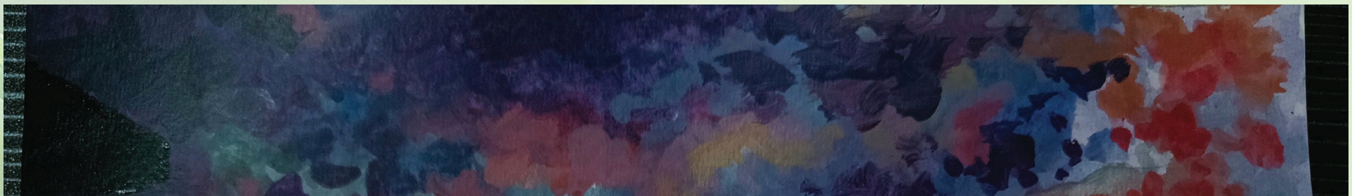

ENGLISH SECTION

Editorial Board

Dr. Prachee Dewri
Dr. Santoshi B. Mishra
Mr. Piyush B. Chaudhary
Ms. Seema Meena

Student Editors

Ms. Saloni Bharti
Mr. Sahil Singh

INDEX

1. SAME-SEX MARRIAGE JUDGEMENT: WHAT NEXT? / ASTITVA SINGH ---- 29
2. THE UNKNOWN ADDRESS / SHAYON UPADHAYA ---- 30
3. BOSE : THE SCHOLAR REBEL OF BENGAL / SHAYON UPADHAYA ---- 32
4. UNHEARD, UNSEEN, UNBROKEN / SNEHA DEVVANSHI ---- 34
5. IF SHE WERE REAL / HANSIKA SAHU ---- 35
6. RESILIENCE / KUSHAGRA GUPTA ---- 35
7. YOUR DESTINY ISN'T HERE / CHITESH KAPOOR ---- 36
8. ETERNITY HAS AN END / CHITESH KAPOOR ---- 36
9. JUST EGOISM MATTERED / CHITESH KAPOOR ---- 37
10. THE GAME OF THE DEATH HOLE / ARCHITA SINGARIKA SARMAH ---- 37
11. DIRECTOR / ARCHITA SINGARIKA SARMAH ---- 38
12. YOUNG / KAZI ROSON MUSTAFA HASAN ---- 38
13. PORTRAIT OF A LADY UNDER THE BRIDGE / MAITHILI GOSWAMI ---- 39
14. SAILING LIFE / SANDARBH ASTHANA ---- 40
15. PEACE / VAIBHAV KHETAN ---- 40
16. HERE WE ARE AGAIN / PRATEEK ARSH ---- 41
17. AFTERLIFE / BHARAT BHUSHAN RATH ---- 42
18. EXPERIMENTALISM IN MUSIC AND HOW I FOUND A PLACE IN IT / ADITYA BHARDWAJ ---- 43

Same-Sex Marriage Judgement: What Next?

ASTITVA SINGH
MA English, II year

The 17th October 2023 Indian Supreme Court judgement on the same-sex marriage case was not received happily by the Indian Queer community. The court refused to legalise same-sex marriages, thus crashing all hopes of a beautiful equal future for queer people living in India. This also comes at a time when Nepal and Thailand, two neighbouring nations of India, have legalised same-sex marriages. At the same time, these two nations emerged as resilient nations to overcome the colonial notions of homophobia, but India particularly lags behind. India has a population of around ten to twelve lakh LGBT people who have accepted their sexual orientation and come out in public. The majority are still not able to talk openly about their sexuality, waiting for legal rights to establish queer-friendly legislation in India. Thus, the Supreme Court judgement is a disadvantage to many queer people in India.

Marriage comes with a bouquet of rights, which includes opening a joint account with a partner, nominating the partner in insurance and medical claims, live-in relationships, etc. These advantages are deprived of the LGBT community, making them vulnerable to social injustices. While the Parliament of India has established a law for transgender protection, hardly any desirable changes have occurred in India, and transgenders are still living in primitive and pathetic conditions. AIDS patients from the LGBT population hardly have access to quality healthcare facilities and many die due to a lack of timely facilities. The conditions are inhumane in some parts of rural India, where hegemonic notions are dominant and hetero-patriarchy structure blankets over society. Thus, it is crucial to decide and act in favour of the Indian queer community in order to overcome grave human rights concerns and deficiencies in social structure.

The next step after the Supreme Court judgement is to initiate a mass advocacy programme among Indian citizens, focusing much on the youth population. The best way to go forward with this is to include texts on queer studies from all disciplines in school textbooks. This will help establish a basic understanding of the alternative sexualities within the dynamic concept of gender. Students will be able to grasp the issues of LGBT and derive innovative solutions from the public policy mechanisms to solve these issues. Alternatively, advocacy programmes should be initiated at the school level where both students and their parents can discuss alternative sexualities, like gay and lesbian. This will also help in neutralising the wrong baseless prejudices attached to the LGBT community in India, which are often linked with psychiatric diseases and the abnormal work of the devil. Attempts need to be made to allow adolescents to discuss their sexual orientation with teachers, parents, and friends in order to reduce risks of mental health problems.

On a legal and political level, much work needs to be done even after much has already been done. The vast number of archives on queer studies needs to be established as a basis of arguments along with contemporary social scenarios. Homosexuality and other alternative sexualities always existed in India until the colonial government banned "unnatural desires". People of different professions and minds need to come together and fight for queer issues, keeping the vast queer history of India as its background. Collectively, heterosexual and homosexual people can help in reaching the desired goal of an equal society for LGBT people.

THE UNKNOWN ADDRESS

SHAYON UPADHAYA
BA (H) Economics, III year

The night began with a familiar sense of dread. I had been at the office late, again, buried under files and figures. I glanced at the clock on my desk: 10:00 PM. My eyes burned from staring at spreadsheets all day, and my fingers ached from relentless typing.

“Akash, one more thing,” my boss, Maheep Puri, had said earlier in the evening, tossing another file onto my already towering stack of work. "Deadline’s tomorrow morning. You’ll manage, right?"

There was no choice but to nod. The idea of staying back late on a Saturday night, knowing that Sunday too would slip away to exhaustion, only added to my frustration. My solace? A lukewarm cup of instant coffee I fetched during a short break. I sighed, my shoulders slumping under the weight of another sleepless night. Last night had been restless enough, and now, this. By 11 PM, though, I was done. I leaned back in my chair, stretching, and checked my watch. The office was deserted, my colleagues having left hours ago. I grabbed my bag, doused my desk lamp, and headed to the parking lot.

The night air was crisp, but it felt heavy. The roads were eerily empty, their silence broken only by the occasional hum of a distant vehicle. As I drove through the deserted streets, a strange unease began to settle in my chest, but I shook it off. The sky hung low, painted a deep indigo, with clouds casting shifting shadows across the faintly glowing streetlights. I felt strangely out of place, as though I was the only living soul in the vast expanse of Delhi.

When I reached my house, the streetlights were flickering, casting long, dancing shadows that made the world look distorted. I parked, got my things and approached my house. Strangely, I saw the front door was slightly ajar. My parents, who retired early, were usually meticulous about locking up, even though I had a set of keys. Maybe Ma had forgotten to latch it properly before bed.

Inside, the dim lighting made everything feel off-kilter. Dropping my bag on the sofa, I went on to freshen up after a tiring day at work. I noticed that the bathroom, always to the left of the corridor, seemed to be on the right. I reasoned that sleep deprivation had got a major hold of my senses. Thereafter, I checked the fridge, reheated the leftovers my mother had prepared, and sat on the sofa to eat. As I sat down, a peculiar smell wafted through the air, something faintly burnt, like charred wood. Dismissing it as residual smoke from nearby festivities, I relaxed, letting the comforting silence of home envelop me.

The smell grew stronger, and I heard a rustle, faint but unmistakable, coming from the hallway. My breath hitched. “Ma, is that you?”

No response. “Ma, are you there?” I stood and took a few hesitant steps toward the sound.

From the shadows emerged an elderly woman. She was slight, her gray hair pulled into a loose bun, and she clutched the folds of her shawl. Her presence froze me in my tracks.

She seemed as startled as I was. “Who... who are you?” she stammered.

“I should be asking you that,” I said, trying to

mask my fear with authority. “This is my house.”

“No,” she said firmly, her voice quivering. “This is my house. You must have made a mistake. This is house number 1389.”

“1389?” I echoed, confused. My house was three doors down—1386. Had I truly entered the wrong house? The exhaustion must have played tricks on me.

Her face mirrored my shock. “Who are you, young man?” she asked, her tone both wary and bewildered.

“Forgive me,” I stammered, mortified. I live just three houses down. I must’ve been so tired that I...”

She smiled, her expression softening. “It’s all right. Come, sit for a while. You look tired. Have a pancake.”

Despite my unease, her kind demeanour calmed me. I sat on a chair as she shuffled to the kitchen. She placed a plate of golden pancakes in front of me.

“I made these for Adam, but he wouldn’t mind if I share.”

Her hands trembled as she spoke, her voice tinged with melancholy. I listened as she spoke, her words weaving a tale of solitude and longing. She told me how she spent her days reminiscing about her late husband and how the house was her last connection to him.

“After my husband passed, it’s been lonely here. My son, Adam, he’s so busy with his work. He’s supposed to visit today, though. I’ve been waiting for him.”

“You remind me of Adam, you know,” she said softly. “Kind eyes.”

Her words stirred a pang of sadness in me. I promised to check on her whenever she needed. “Think of me as a son,” I said, trying to comfort her.

As I left, I glanced at the house number. Sure enough, it was 1389. I shook my head at my mistake, muttering about how sleep deprivation could make you delusional. Back in my actual house, I barely managed to kick off my shoes before collapsing into bed.

The blaring sirens woke me. From my window, I saw chaos outside. An ambulance and fire brigade had pulled up near house 1389. Smoke curled from its windows, and neighbours crowded the scene. My heart dropped.

I threw on a jacket and rushed over. The house was cordoned off by the police. I hurried out, joining the gathering crowd. I went up to an officer.

“What happened?” I asked, breathless.

The officer sighed. “Looks like a burglary gone wrong,” he replied grimly. “The old lady, Mrs. Christina Matthews... she didn’t make it. They hit her with something sharp at the dining table. Smoke was detected this morning, and when the fire brigade arrived, they found her body.”

“No,” I whispered, shaking my head. “That’s impossible. I was with her last night. We talked. She was waiting for her son.”

The officer frowned. “Her son had arrived just this morning. He identified the body.”

My legs felt like lead as I stepped aside, trying to process the information. A man, presumably Adam whom Mrs. Christina mentioned about, stood near the house, talking to the police. His face was pale, etched with grief.

I approached him hesitantly. “I’m so sorry for your loss,” I began. “I met your mother last night. She spoke so fondly of you.”

He froze. “You... met her? Last night?”

“Yes. She said she was waiting for you.”

Adam’s face turned ashen. “That’s not possible. The forensic team confirmed she died three days ago. I’ve been trying to reach her, but...”

"No," I insisted. I sat in her living room. She gave me pancakes."

The officer overheard and stepped in. "The burglars broke in through the windows, but the door was locked from the inside. She lived alone. Are you sure you weren't mistaken?"

Mistaken? My memories were vivid—the warmth of her pancakes, the sadness in her voice. Yet the weight of their words pressed down on me. If she had been dead for days, then who or what did I meet last night?

Adam placed a hand on my shoulder. "I believe you. My mother was kind. If her spirit lingered, she'd only want to make someone feel welcome. Maybe... maybe you gave her some peace."

As the ambulance carried her body away, a chill ran through me. I realized that some addresses are not just places; they're thresholds. And last night, I had crossed one unknowingly.

Back in my room, I shut the door and sat on the bed, gripping the edges of reality with trembling hands. The spine-chilling truth was clear: the woman I met wasn't among the living. And yet, she had seemed so human and full of longing and warmth. As though, even in death, she clung to the hope of her son's return.

BOSE: THE SCHOLAR REBEL OF BENGAL

SHAYON UPADHAYA
BA (H) Economics, III year

Whenever one hears the term "Neta," it often evokes contempt. The average Indian is all too familiar with the widespread revulsion surrounding political leaders branded with this term. Yet, a subtle transformation to "Netaji" ushers in a wave of reverence. It becomes a word brimming with respect, evoking tales of courage, sacrifice, and an unyielding commitment to the nation. To many, this name conjures the indomitable spirit of a man whose contributions reshaped India's fight for independence i.e. Netaji Subhas Chandra Bose. Revered as the "Tiger of Bengal," Bose's mere name became a symbol of defiance, unnerving the colonial British administration and rallying millions of Indians under a common dream of freedom. Bose's journey from a brilliant student to an enduring icon of India's freedom struggle is a testament to his unparalleled resolve and vision.

Born into a prosperous family, Bose grew up in an environment where education and spirituality were deeply cherished. His early life, shaped by a blend of modern education and traditional values, set the foundation for his extraordinary future. He was enrolled in an English medium school, where he excelled academically, showing a natural inclination towards subjects such as Philosophy, Literature, and the works of prolific thinkers. Despite his Western-style education, his worldview was profoundly rooted in Indian spirituality, influenced by the teachings of Sri Ramakrishna Paramahansa and Swami Vivekananda. His mother's religious fervour further immersed him in the study of the Vedas and Upanishads, nurturing a spiritual consciousness that would later complement his revolutionary zeal. From his early years, he exhibited an unrelenting

determination to excel. His brilliance shone through his academic performance, securing top ranks and setting him apart as a scholar of great promise. At Presidency College in Kolkata, a pivotal incident marked the beginning of his transformation towards nationalism. When an English professor made derogatory remarks about Indian culture, Bose's nationalist instincts flared and he organised a protest that escalated into a confrontation, ultimately leading to his rustication. Far from discouraging him, this episode ignited a fire within him, solidifying his commitment to the cause of India's independence. He later graduated from the Scottish Church College and, true to his tenacity, excelled in the Indian Civil Services (ICS) examination, securing the fourth rank in the open competitive examination, a feat that underscored his intellect and discipline. Yet, the prospect of serving the British administration was incompatible with his ideals. In 1921, Bose decided not to take the final examination for the ICS, a decision that epitomized his unwavering dedication to India's freedom. This marked the beginning of a political journey that would see him rise as one of the most charismatic and dynamic leaders of his time. Initially aligning with the Indian National Congress, Bose collaborated with leaders like Mahatma Gandhi and Jawaharlal Nehru. While he admired Gandhi's vision, Bose's approach diverged significantly due to his belief that India's liberation could not be achieved merely through passive resistance. One of the most iconic episodes in Bose's life was his daring escape from house arrest in 1941.

Under constant surveillance by British authorities, Bose devised a meticulous plan to elude his captors. Feigning deep meditation and renunciation, he convinced the authorities to grant him solitude. Exploiting this opportunity, he disguised himself and embarked on a perilous journey to Afghanistan, eventually reaching Germany. This act of audacious courage not only demonstrated his resourcefulness but also underscored his unwavering determination to free India from colonial shackles. While in Germany, Bose sought support for India's independence from Adolf Hitler. An intriguing anecdote from their meeting illustrates Bose's sharp intellect. Before their encounter, Hitler reportedly sent several doppelgangers to test Bose's ability to identify him. Demonstrating his keen observation and presence of mind, Bose recognized the real Hitler instantly, earning his respect. This meeting, though controversial, highlighted Bose's willingness to explore unconventional avenues to achieve his goal. Bose's journey then took him to Southeast Asia, where he reorganized the Indian National Army (INA), christened as the Azad Hind Fauj. His fiery speeches and magnetic personality galvanized thousands of Indians, including women, to join the INA. Bose's progressive mindset was evident in the formation of the Rani of Jhansi Regiment, an all-women combat unit, which emerged as a revolutionary step that challenged societal norms and showcased his belief in gender equality. His iconic slogan, "Give me blood, and I shall give you freedom!" became a rallying cry, inspiring countless patriots to sacrifice everything for the motherland. Despite the INA's eventual military setbacks, its impact on India's independence movement was profound. Bose's leadership and sacrifices left an indelible mark on the nation's consciousness, instilling a renewed sense of pride and determination among Indians. The mystery surrounding Bose's disappearance in 1945 continues to captivate the imagination of

millions. According to official accounts, he died in a plane crash in Taiwan. However, numerous theories suggest otherwise, fuelling speculation that he survived and lived incognito.

One such theory revolves around Gumnami Baba, a reclusive figure discovered in Uttar Pradesh in 1985. Many believed him to be Bose, citing his enigmatic nature and striking resemblance to the leader. For a man deeply influenced by spirituality, it is conceivable that Bose might have embraced a life of renunciation, distancing himself from the public eye after dedicating his life to the nation. Bose's legacy transcends his role as a freedom fighter. He was a visionary who embodied the ideals of selflessness, courage, and unwavering commitment to the greater good. His life serves as a powerful reminder of the potential within everyone to effect change and challenge injustice. On his 128th birth anniversary, we celebrate not just the leader who fought for India's freedom but also the scholar and spiritual luminary who inspired millions to dream of a free and prosperous nation.

Netaji's story is one of transformation—from a young boy immersed in the teachings of the Vedas to a revolutionary leader who redefined the contours of India's independence movement. It is a story of resilience, where every challenge became an opportunity to rise stronger. Above all, it is a story of hope, reminding us that true leadership lies in serving selflessly and striving tirelessly for the greater good.

UNHEARD, UNSEEN, UNBROKEN

SNEHA DEVVANSHI
B.Com(H), II year

I wanted to learn badminton, but I was stopped.
I wanted to be a singer, but I was mocked.
I loved sketching, and they praised me high,
But when I chose it as a career, they asked me why.

I wanted to go for walks alone, I was tormented.
'Cause I'm a girl; I have to retreat when prevented.
I was writing poems, letting my thoughts run free,
But they snatched my pen—it was not meant for me.

I want to make my parents proud; I want to see them happy.
But the only way to do that is to study and then marry.
Ladies in our society are left with no choices,
People preach feminism—will they ever raise their voices?

Today, I must study, I must earn,
Yet I must wait—first family, then my turn.
I can't shout, I can't stand for myself,
They say dependence defines a woman's self.

This is the life of a woman, her dreams often confined,
Shaped by decisions that were never hers to decide.
Tied to expectations, struggling to break free,
Welcome to our society—where she fights to just be.

IF SHE WERE REAL

HANSIKA SAHU
B.Com(H), I year

Two rooms,
One for me, one for her.
Long hair, Mystique,
A replica of me -
Isn't it unlikely?

If I fall ill, so will she,
Bound by fate, as it's meant to be.
I like painting, she will too,
I'm choosing her - would you?

I will run errands, she'll chase,
To excel in competition, I race.
I'll be groomed for test days,
While she sits in my place,
Her words on paper, but my face.

Then one day, I'll be gone,
Leaving her to grieve alone.
My precious possessions, all she'll receive.
I won't be there to witness or believe.

I'll be far away from home,
Drowned in thoughts,
As deep as the ocean where echoes are caught
But in the end, it's mere illusion.
It would be so much easier
If she were real,
I could leave the dilemmas of my life
For her to deal.

RESILIENCE

KUSHAGRA GUPTA
B.Sc (P) Life Science, I year

Rushing into my room, I shut the door forcefully,
Lying by the door, I cried terribly.
Being bullied in school had become perpetual,
They thought that to their taunts, I was habitual.
But didn't I deserve to be ecstatic just like others?
Depressed in my mind was how I spent those years.

However, I do not hold my previous psyche,
Your bullies, now I find no more spicy.
You intimidate me once more,
A lot more for you I have in store.
I am more courageous and capable now,
To tyrannize me further, I'll no more allow.

My sorrow led me to a new spring life,
Where in my dwelling, no one would create a strife.
Indeed I deserved to be jovial and thus found my happiness,
To all those suffering there, upon you, may God shower His bless.
Remember not to get subdued by their negativity,
Rather give them a blow with your creativity!

YOUR DESTINY ISN'T HERE

CHITESH KAPOOR
BA (H) Economics, I year

Don't roam here and there
Never waste time
Or you will not be spared
Because God can see you
From everywhere
You may win or lose
But never stay in fear
Don't let your face
To be filled with tears
Though it's raining today
But tomorrow
The sky will be clear
Always care always share
Because true people are rare
The world is becoming mere
Work hard to succeed
Because your destiny isn't here
As we all are aware
That one day
We all will be lying
On a bed of flare

ETERNITY HAS AN END

CHITESH KAPOOR
BA (H) Economics, I year

A bright day, calm waves
Low crest at the bay
Walking barefoot, white sand
Softer than a tot's hand

A Creation of Nature
Fathomless it was?

Ocean of clouds, swimming passerine
Soothing breeze at the bay
Radiating star, white rays
Warmer than a caress embrace

A creation of Nature
Fathomless it was?

Brightness dimmed, murky clouds
Deluge at the bay
Pellucid crystals, thunder with might
Cooler than a freezing night

Ether cleared, an arch transpired
Band of seven at the bay
Creation of Nature, bow-like bend
Nature is eternal and
Eternity has an end

JUST EGOISM MATTERED

CHITESH KAPOOR
BA (H) Economics, I year

He was betrayed
Souls were changed
Unity was destructed
Its Fragments were shattered...

Friendship minimised
Friends were scattered

Long time passed
When together they laughed
Those laughs went silent
Their echoes were shattered...

Friendship minimised
Friends were scattered

Faces were disguised
True colours faded
Nostalgia is what remained
Those moments never shattered...

But Friendship demised
Just egoism mattered

THE GAME OF THE DEATH HOLE

ARCHITA SINGARIKA SARMAH
B.Sc Physical science, I year

Tick tock, tick tock , tick tock
The clock shouts ----
The time for your soul to venture out and cross the darkened border.
Suddenly, I woke up with fear in my eyes,
I knew it was the time
The time for karma to trap me in the cardigan of sin.
I was sternly yanked into the puddle of death hole
The game that everyone fears off.
I found myself completely stuck, struggling to escape
I screamed, I cried, I bawled
But it was of no use.
I was already trapped in the web knitted by sin
Today, it was time for me to pay off to karma.
I completely drowned into the puddle.
But suddenly, I heard someone yelling my name.

Sanity wake up, sanity wake up
I felt a jerk. Oops! it was a dream that gave me a second chance.
The chance to save humanity, to save life, to help, to survive .
Karma works, karma is a trap - "the mouse trap".

DIRECTOR

ARCHITA SINGARIKA SARMAH
B.Sc Physical science

Take 1 -
Holding your hands
I first stride into the
Blossom of rose,
Everything felt so new yet...close to the heart.
The essence of love felt so non-fictional,
That every emotion that was packed, erupted coercionly
But this dream was too momentary.

Suddenly the scene changed
Cut!

Take-2! Play.
Tears drowned the contentment soul ,
Suffocating the morals.
The soul yelling in pain intolerable with pain
No no, please help her,
I am helpless, she is in emergency
Why so cruel?
Please God lend a hand of help.

Scene Cut! Take-3!
Again a new hand, a new blossom of Lily
Lots of hope -
eruption of emotions, bandaging of wounds
Miracles of life.

YOUNG

KAZI ROSON MUSTAFA HASAN
Bsc(H) Anthropology, II year

Being young
Being too quick
in everything
....even with love;
Thinking everything
was my God-given
choice, when it
wasn't.

Being young
Being too fast
in anything
....even with saying
yes, assuming that
it was always
something to be
excited about,
even when it
didn't look so
cool.

Being young
Being too swift
....also with the word
no, presuming that
nothing was worth it;
trusting that
anything good will hurt;
getting too jaded to try it
first.

PORTRAIT OF A LADY UNDER THE BRIDGE

MAITHILI GOSWAMI
BA(H) English, III year

Synopsis: I was in a cab, on my way to my flat from the airport when it halted at a red light under a flyover, and I chanced upon a scene too moving to forget. It was of this destitute woman who sat between her troop of children, ever the matriarch in all her glory, looking down her nose at the world that had set her aside at the same time as she fussed over her emaciated children who had rags for clothes and mud for hair. Only a fool would think her helpless, I thought, for she was stronger than any of us if strength were ever a thing. This poem was inspired by her. I do not know her name, and doubt that she can read. I only hope she knows that she is not invisible, not to me and not anymore to those who would do me the honour of reading this poem.

In the street under the overpass,
Where rats are far too known
To the food in your belly
And the clothes on your person,
She is almighty.

For when the sun is too loud
And the honk of the cars too bright,
When the thirst in your throat is a living thing
that your spirit is as good as a spright,
it is she who stands between
the darkness and the light.

She is the mother who salvages
Grub discarded by those who call you savages.
She is the sister who sings
Lullabies when the noise of the city stings.
She is the brother who protects
When to leave you illness, insist the insects.

And as she takes her place
In the centre of the asphalt she calls her space,
Surrounded by her fateful litter
From a man never you saw whose face,
As she refuses to let you succumb
To the cruelty of your race,
And smiles a promise of amelioration
Our kind was never known with to grace,
She becomes the father
Who for you, would set the world ablaze.

SAILING LIFE

SANDARBH ASTHANA
BA Prog., II year

You are on a boat
Floating on lite
So beautiful they say
You don't wanna go away

Everything seems fine
Your sun shines
It's you and only you there
Enjoying the taste of life

But they say na
"Nicer things are short-lived"
People start to throw pebbles
Forming ripples
Splashing the noise they say
Your boat fumbles

You become alone in a moment
Feeling life so empty
You waited and waited
But, no one comes
It's life dear
It's all you there

Then
You slip
You stumble
You dive out
Leaving the boat
Full of probabilities!!

Disturbance is a wave
So it died out the next moment
All was again a sheet of water
Sprinkling the peace
Like nothing happened

Your boat stabilizes
Your life was again on track
Clouds were clearing
Your dream was in front of you
You were ready to go, my friend!
But the boat was empty
No one was there to sail...

PEACE

VAIBHAV KHETAN
BA (H) Economics, I year

A question comes to my mind,
For you, it may be silly or unkind.
But I stand with the truth.
Not thinking of bearing individualistic fruits.
Oh! My dear, it is world
You live with people,
You have to think for others.
I chant Rama, you chant Allah.
I celebrate Diwali, You make Eid.
Then, what is the difference,
When all need peace.
I keep my promise,
You keep yours.
Let's make this world null of chaos.
You are my brother,
I am yours.
Be it Quran or Geeta,
This world is ours!

HERE WE ARE AGAIN

PRATEEK ARSH
BA (H) English, III year

Here we are again
When love's in the air
but what about the smog settled deep inside my lungs?
Which pills can one take
to rid themselves of the ailment?

From loving your tears
to praising your fears
From falling in love
to falling apart
Time
The traitor giving me the blues
that I can never recover from
Time and time again
I told you that my favourite colour was blue
and you made me feel every shade, every hue
If you liked the taste of whiskey and the glass
then why did you break the bottle?

I'd rather drown in work
than sink in grief or sorrow
But as I lay my head on the pillow
I question, where's the golden tomorrow?

A question I asked myself two years ago
I think I did go
from being on your mind to
being on your nerves
Yet, the nerves I can't cut
as the ties are strong

Remember how I asked for your sweet nothings?
I guess I'm left with only one-half of it
The golden string under my left rib
knotted to the one under yours
But what if my rib broke
The string snapped
The knot split
Have the Fates run out of yarn?
Unable to weave me an unbreakable string

And it does end
not with a bang
neither with a whimper
but with a sigh that
transitions into silence
and perhaps that's a sound that can make you go deaf

AFTERLIFE

BHARAT BHUSHAN RATH
BA (H) Philosophy, I year

The clock struck one.
What have we become?
For you, I am alive,
In your ugly heart that you don't even have.
The sheer tears are like a waterfall of the eye,
Beautiful to look at,
But a disgust in disguise.

The clock struck two.
For you, I was dying.
I was waiting for your help,
But you were just crying.
I was crying too,
But you were also blind.
You only heard my screaming,
Not the pain behind.
"Help me, save me,"
You never did.
Did you even love me?
That's what my question is.

The clock struck three.
Silence scream.

The clock struck four.
My soul died.
The clock struck five.
The ocean sighed.

The clock stopped as it was midnight.
I don't know where the time went,
Because my breath was dying.

The clock never struck again.
There wasn't anything like time.
I was getting lost somewhere.
Someone threw flowers on me,
it was like a beautiful curse.
The shadows were talking to me,
we all were listening to the grief in hymn.
It was the time of realization,
we all have come to believe
the love never came,
Now the hate was left behind.
Fortunately, we all died.
Unfortunately, they all survive.

EXPERIMENTALISM IN MUSIC AND HOW I FOUND A PLACE IN IT

ADITYA BHARDWAJ
B.Sc (Hons) CS, III year

How experimenting with beats led me to Desi Hip-Hop, a sound that doesn't just exist but demands to be felt. It's about the artists who shaped my vision, the raw storytelling that sets DHH apart, and why I see myself as part of this evolving movement.

Born and raised up in Delhi, as a child, I have always been the kind of person who loves tinkering - curious, constantly experimenting, and finding excitement in new ideas.

In school, just an average kid, just curious, tinkering, trying fun experiments.

Ended up majoring in CS at Hansraj.

Hansraj? Great vibes, great culture, great people.

Unsure of my path for first year, giving all kinds of stuff a shot - joined societies, tried dramatics, Dance, filmmaking, showed up at events.

After trying everything, I found what really clicked.

At first, it was just beats - messing with samples, layering sounds, turning chaos into rhythm. But music wasn't just a hobby. It was the blueprint. The obsession. The rebellion.

It wasn't just an escape, but a way to carve out space in a world that moves too fast—where thoughts, emotions, and stories get lost in the noise. The more I experimented, the more I realized I wasn't just making music. I was building something raw, something real.

Then came Desi Hip-Hop—loud, unfiltered, unpredictable. It didn't just match my sound. It gave it a voice.

DHH doesn't fit in a neat box. It's messy, aggressive, experimental. One track is pure lyrical fire, the next, a fusion of sounds that shouldn't work—but do. That's what makes it different.

More than anything, Desi Hip-Hop is raw storytelling. No filters. No pretense. Just real emotions, real truths—the kind that don't always make people comfortable. And that? That's exactly the space I want to be in.

If Hansraj has a sound, KRSNA is a big part of it. He walked these same halls, carved his own lane, and put Indian rap on the map before the industry even took it seriously. His lyricism, his precision—it's the kind of technical mastery that makes you sit up and listen. The way he weaves multilingual flows with punchlines that sting? That's not just rap. That's craft.

But hip-hop isn't just about skill. It's about pushing limits. Breaking expectations. That's where artists like Chaar Diwaari, Hanumankind, and Dhanji come in. They don't just make music—they build worlds.

Garv Taneja, better known as Chaar Diwaari, doesn't just make music—he dismantles the very idea of what music should be.

Chaar Diwaari's 'Mera Saman Kaha Hai?' wasn't just a track. The track is inspired by the struggles of a close friend with schizophrenia, highlighting his ability to translate deeply personal experiences into sonic narratives. While his music may not be for everyone, Chaar Diwaari embraces his uniqueness unapologetically. It only adds to his enigmatic appeal. It feels like a diary entry I forgot I wrote. No polish, no filters. Just raw, unshaken truth.

Seedhe Maut, a hip-hop duo from Delhi, consisting of Calm (Siddhant Sharma) and Encore ABJ (Abhijay Negi), likely sees music as a way to express themselves authentically. Their music captures the emotions of urban and suburban youth, such as dreams, aspirations, and struggles, which inspires me.

And Dhanji? Hailing from Ahmedabad, Dhanji refuses to be boxed in. He bends language and sounds like it's clay, rapping in Gujarati, flipping cadences, making music that's straight-up unpredictable. He's proof that you don't have to follow the rules to make an impact. And then, there's the Don Quixote reference—not just a name-drop, but a manifesto. When an artist laces his work with spooky typography and Cervantes' madness, you're left wondering: is he a lunatic or a genius? With Dhanji, it's both.

Like Quixote himself, he isn't lost in delusion—he's committed to a world he's built in his head, one where sound knows no boundaries and expression has no limits. The real madness isn't in his music—it's in a world that refuses to dream as wildly as he does.

Nanku's existential crisis wasn't a phase—it was a reckoning. Life felt like a script written by someone else, a story he had stumbled into without consent. "I didn't even understand how I ended up here," he admitted. It was the kind of disorientation where everything feels both meaningless and overwhelming at once.

These artists didn't just change the sound of Desi Hip-Hop. They made me believe I could be a part of it.

I've stopped making hip-hop music—I'm making music that fuses everything I want into a single song. - Chaar Diwari

This isn't just about breaking rules. It's about creating new ones.

I'm not just here to listen—I'm here to create.

The underground isn't just evolving; I'm shaping it, track by track, breaking every limit placed on sound, words, and expression. And I'm just getting started.

Manan
BA (H) Philosophy, I Year

Mahi Rana Bcom (hons)

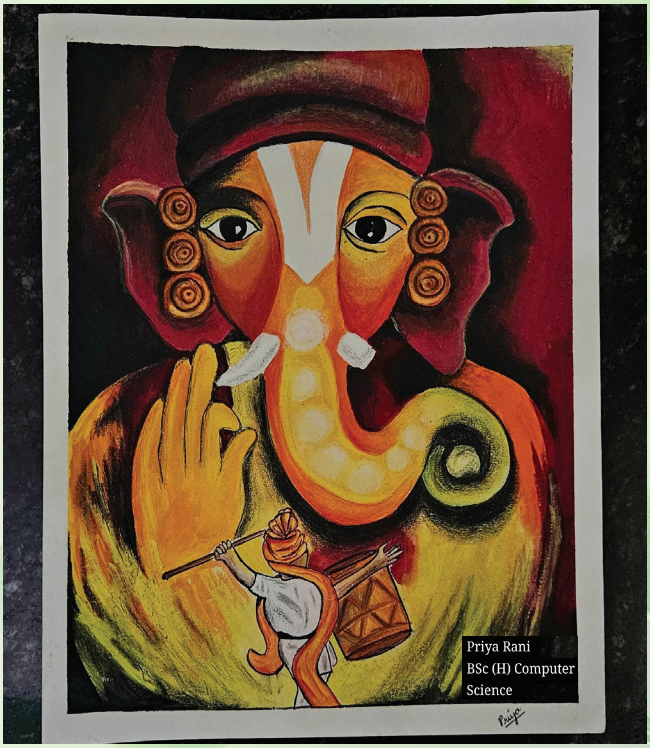
Priya Rani
BSc (H) Computer
Science

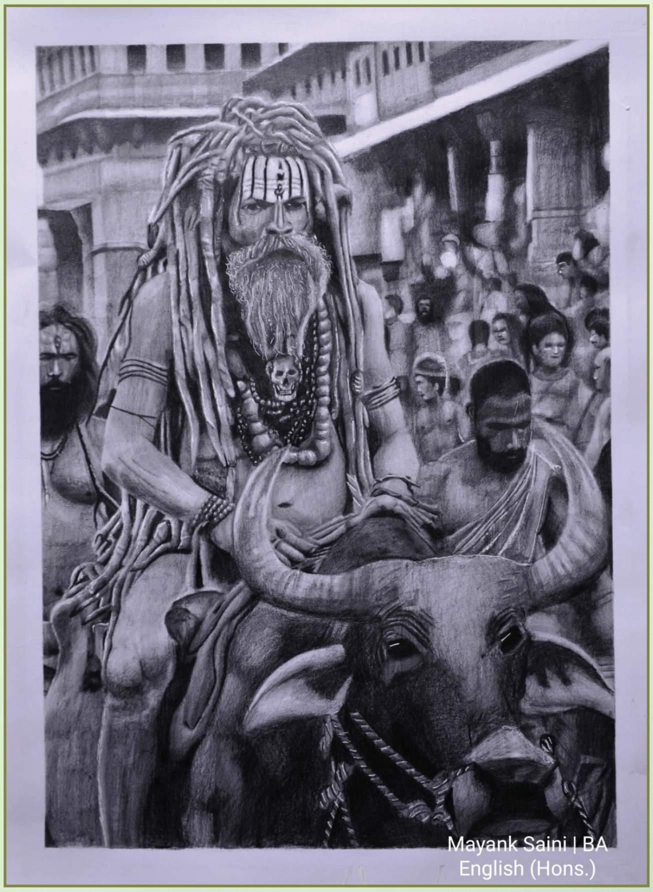
Mayank Saini | BA
English (Hons.)

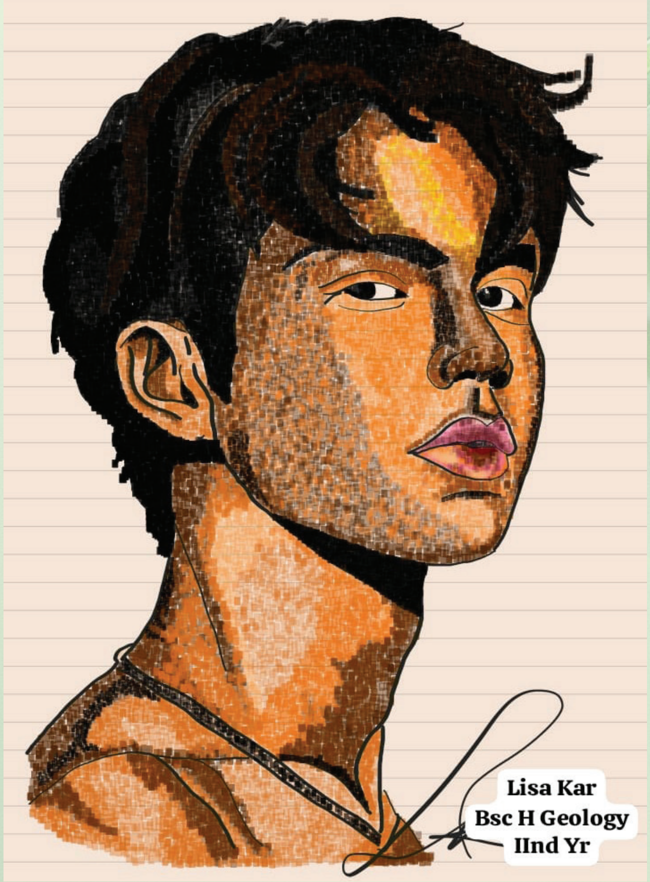
Lisa Kar
Bsc H Geology
IInd Yr

संस्कृतखण्डः

सम्पादकौ

डॉ. ब्रह्म प्रकाशः
डॉ. खुशबू शुक्ला

छात्रसम्पादकौ

कुमार आदर्शः
पूर्णिमा

अनुक्रमणिका

1.	वाग्वर्धिनी : संस्कृतवाद-विवादसमितेः संविधानम् - बासुकीनाथझा	48
2.	वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम् - कुमार आदर्शः	48
3.	मनः - वैष्णवी	49
4.	यतो धर्मस्ततो जयः - धीरजकुमारः	50
5.	दर्शनपरिचयः - पीयूषः	51
6.	हासः - विलासः - पूर्णिमा	52
7.	गच्छ अर्जुन गच्छ - अङ्कुशकुमारः	52
8.	महाभारते गीताग्रन्थाः - शृङ्खलाशुक्ला	53
9.	संस्कृतवाङ्मये दशत्रयी - अङ्कितकुमारः	54
10.	उपनिषत्सु चतुर्महावाक्यानि - पीयूषः	54
11.	मम प्रियः कविः कालिदासः - ॐकारनाथझा	55
12.	संस्कृतलोकोक्तिभिः निर्मिताः हिन्दीमुहावराः - पलकपाण्डेयः	55
13.	प्रश्नोपनिषत्सारः - प्रेमजीतः	56
14.	क्रीडावल्ली (कन्दुकप्रेषणम्, फलग्रहणम्) - राखी	57
15.	संस्कृतसाहित्येतिहासग्रन्थाः - सुनीलः	57
16.	महाभारतस्य प्रणेता - कुमार आदर्शः	58
17.	श्लोकान्त्यक्षारीश्लोकसङ्ग्रहः - अजयः कुमारः	58
18.	आयुर्वेदस्य मूलभूतसिद्धान्ताः - अमितकुमारः	60
19.	भगवतः पाणिनेः संज्ञा - पूर्णिमा	62
20.	कोऽस्ति श्रीकृष्णः विभिन्नतत्त्वेषु - मनीषा कुमारी	63
21.	अष्टाङ्गयोगस्य स्वरूपम् – शृङ्खलाशुक्ला	64

वाग्वर्धिनी : संस्कृतवाद-विवादसमितेः संविधानम्

वासुकीनाथ झा
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

वयं, वाग्वर्धिनी, हंसराज-महाविद्यालयस्य संस्कृत-वाद-विवाद-समितेः सदस्याः सङ्कल्पं कुर्मः यत् संस्कृतभाषायाः संरक्षणं संवर्धनञ्च कृत्वा ज्ञानं, तर्कः, संवादश्च इत्येतान् भावान् विकासयेम। निष्पक्षां, पारदर्शिनीं समावेशिनीं च समितिं स्थापयितुं वयं प्रतिबद्धाः।

तार्किकानां, प्रतिभाशालिनां, योग्यतायुक्तानां च विद्यार्थिनां शोधार्थिनां च सामूहिकसमन्वयेन संचाल्यमाना अस्माकं समितिः शास्त्रीयपरम्परायां नवाचारयुक्तविचारधाराभिश्च सह वाद-विवाद-संवादानाम् आयोजनार्थं पटलं प्रदातुं प्रयासरताः।

"वादे वादे जायते तत्त्वबोधः" इत्येतं स्वमूलवाक्यम् मान्यं कृत्वा, वाग्वर्धिनी समितिः समतां, समानतां, अभिव्यक्तिस्वातन्त्र्यं, बन्धुत्वञ्च सुनिश्चितुं दृढसङ्कल्पिताः सन्तः अद्य पञ्चविंशतिदिनाङ्के जनवरीमासे चतुर्विंशत्यधिकद्विसहस्रतमे वर्षे अस्य संविधानस्य अङ्गीकरणं, अधिनियमनं आत्मार्पणञ्च अत्र विधाय व्रतम् आविशामः।

वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्॥

कुमार आदर्शः
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

दिल्लीविश्वविद्यालयस्य हंसराजमहाविद्यालयस्य वाद-विवादसमितिं विस्तारयित्वा नूतनखण्डः "वाग्वर्धिनी : The Sanskrit Debating Society" इत्यस्य प्रारंभः ०२ दिसम्बर २०२४ इति दिनाङ्के महाविद्यालयपरिसरे अभवत्। पूर्वतनसमये संस्कृतविभागः इमां संचालयति स्म चास्याः संरक्षकः डॉ. अवनीशकुमाराचार्यः आसीत्। अधुना इमामधारिकस्वरुपं प्रदाय महाविद्यालयस्य संस्कृतवाद-विवादसमितिरूपेणास्याः विस्तारमभवत्। समितेः नित्यप्रतिमार्गदर्शनाय संस्कृतविभागाध्यक्षः आचार्यः डॉ. ब्रह्मप्रकाशवर्यः संरक्षकोऽप्यस्ति।

संस्कृतभाषायां वाद-विवादपरम्परायाः निर्वहणार्थाय भारतीयज्ञानपरम्परायाः प्रचारप्रसारार्थञ्च एषा समितिः सर्वदा समर्पिता भविष्यति। एषा समितिः अन्यविश्वविद्यालयानां कृते आदर्शरूपा भविष्यतीति कामयामहे।

अस्याः समितेः कुलगीतं निम्नलिखितमस्ति। यस्मिन् समितेः मूलभावना उपस्थिता।

यत्र वादो विवादः स्मृतो मूलधीः
वादतो जायते तत्वबोधो नृणाम्।
ध्येयवाक्यं स्ववाक्यं हृदा धापयद्
वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्।।१।।

देहलीविश्वविद्यालयान्तर्लसद्-
आद्यभास्वत्समित्या न किं जायते।
प्रेरणायै नृणां या वरेण्या शुभा
वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्।।२।।

वेदवेदांगशास्त्रोचितं दर्शनम्
सर्वपूर्वोत्तरैः पक्षकैराश्रितम्।
शंकराचार्यगार्गीभिराभासिता
वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्।।३।।

हंसराजो महान् शास्ति विद्यालयो
वैदिकं तत्वमास्थाय सत्ये रतः।
जागृतो जायते प्राङ्गणे सद्गणै
वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्।।४।।

यत्र प्राचीनता नव्यरीत्या जनैः
स्वीकृता लक्ष्यमालभ्य देदीप्यताम्।
सर्वशः संस्कृतं संस्कृतं जीवनम्।
वर्धतां देवभाषानिशं संस्कृतम्।।५।।

मनः

वैष्णवी
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

पतञ्जलिना योगसूत्रे लिखितं यत्, यथा प्रत्येकं मानवः स्थूलरूपेण देहं लभते तथैव सूक्ष्मरूपेण मनः कारणरूपेण आत्मा च प्राप्यते। दार्शनिकैः मनः उभयेन्द्रियं मन्यन्ते, यत् अन्यैः इन्द्रियैः साकं संयुक्तज्ञानं कारयति। मनः इन्द्रियाणां प्रकाशकं ज्योतिस्वरूपञ्चास्ति।

वैदिकाः ऋषयः मनुष्यस्य हृदयगुहायां स्थितां एषां ज्योतिं दृष्टवन्तः ज्ञातवन्तश्च। श्रद्धेयः विनोबाभावेमहोदयः स्वस्य "महागुहायां प्रवेशः" इति ग्रन्थे उक्तवान्—

"मनुष्येण यत् किमपि क्रियते, तत् मनसा एव क्रियते। यदि यः कर्ता अस्ति, स एव विकृतो भवति, तर्हि सम्पूर्णं कर्म विकृतं भविष्यति। यदि चक्षुः सम्यक् भवति, किन्तु मनः दूषितं भवति, तर्हि दर्शनं सम्यक् न भविष्यति। एवं कर्माणि इन्द्रियैः क्रियन्ते, किन्तु कर्मणः उत्तमता वा दुष्टता मनसि अधिष्ठिता अस्ति। अतः आत्मनः मनः किम्? इति निरीक्षणं परीक्षणं च अत्यावश्यकं भवति।" स्वामी करपात्रीजी महाराजः अपि उक्तवान्— "स यत्कृतर्भवति तत्कर्म कुरुते, यत्कर्म कुरुते तदभिसम्पद्यते।"

अस्य अर्थो वर्तते, यः पुरुषः यथाकं संकल्पं करोति, स एव तदनुसारं आचरति। यथा आचरति, तथा भवति। तस्य मतानुसारेण कर्मणः आधारः मनसि उत्पन्नाः विचाराः एव।

भारतीयवाङ्मये मनीषिभिः मनसः निग्रहविषये अनेके विचाराः प्रतिपादितास्सन्ति। संस्कृतवाङ्मये मनः परमं प्रधानं मनुष्यस्य जीवनस्य सारञ्च वर्तते। मन एव मनुष्यं सुखं दुःखं च अनुभावयति। यथा भगवद्गीतायाम् उक्तं—

"उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥" (भगवद्गीता 6.5)

अर्थात् मन एव बन्धुः, मन एव रिपुः। यदि मनः संयमितं भवति, तर्हि जीवनं सफलं भवति। यदि असंयमितं भवति, तर्हि पतनं तु निश्चितमेव।

मनः जीवनस्य सारभूतं तत्त्वम्

मनः जीवनस्य केन्द्रमस्ति। इदं मनः भावान्, संकल्पान्, विकल्पान् च उत्पादयति। मनसः स्थितिरेव जीवनं सुखमयं वा दुःखमयं करोति।

१. विचाराणां प्रभावः यथा वृक्षस्य मूलं पुष्टं चेत्, तदा सः सम्यक् विकसति। एवं यदि मनः शुभविचारैः पूरितं भवति, तर्हि जीवनं सुखमयम् भवति। यदि तु मनसि दुष्टविचाराः प्रवर्तन्ते, तर्हि जीवनं दुःखमयं भवति। उदाहरणतः, यदि छात्रः परीक्षायाः पूर्वं चिन्तायुक्तो भवति, तर्हि सः सम्यक् अध्ययनं कर्तुं अशक्तो भवति। किन्तु यदि सः आत्मविश्वासेन अध्ययनं करोति, तर्हि सः सफलीभवति।

२. भावना मनश्च : मन एव प्रेम-करुणा-रोष-द्वेषादिभावान् उत्पादयति। यदि मनः स्थिरं भवति, तर्हि व्यक्तिः सौम्यः प्रसन्नश्च भवति। यदि मनः अस्थिरं भवति, तर्हि व्यक्ति अशान्तः खिन्नश्च भवति। यथा रामायणे दशरथस्य मनः श्रीरामस्य वनगमनात् दुःखेन विक्षिप्तं जातम्। अतः सः शोकात् प्राणान् त्यक्तवान्। एवं यदि मनः सुदृढं भवति, तर्हि दुःखेषु अपि स्थितप्रज्ञता संभवति।

३. निर्णयशक्तिः मन एव उत्तमं निर्णयं दातुं समर्थं भवति। यदि मनः शुद्धं भवति, तर्हि व्यक्ति उत्तमं निर्णयं कर्तुं शक्नोति। यदि मनः भ्रमितं भवति, तर्हि अपरीक्षितं निर्णयं भवति। यथा अर्जुनः कुरुक्षेत्रे मोहवशात् युद्धं कर्तुं अशक्तः अभवत्। किन्तु श्रीकृष्णस्य उपदेशेन तस्य मनः स्थिरं अभवत्, एवं सः धर्मयुद्धाय कृतनिश्चयः अभवत्।

४. मन एव बन्धुः, मनः एव रिपुः यथोक्तं भगवद्गीतायाम्—

"बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्॥"(भगवद्गीता 6.6)

अर्थात् यदि मनः संयमितं भवति, तर्हि इदं आत्मनः मित्रं भवति। यदि असंयमितं भवति, तर्हि शत्रुः भवति।

मनसः संयमनाय उपायाः

1. ध्यानं (Meditation) – ध्यानस्य अभ्यासेन मनः स्थिरं भवति।
2. सद्भावनाः (Positive Thinking)– सततं शुभविचाराः धारयितव्याः।
3. योगाभ्यासः (Yoga)– योगेन शरीरं मनश्च संतुलितं भवति।
4. शास्त्राध्ययनं (Study of Scriptures) – गीता, उपनिषद् इत्यादिग्रन्थं पठित्वा मनसः स्थैर्यं लभ्यते।
5. सत्सङ्गः (Good Company) – सज्जनानां संगतिः मनः शोधयति।

निष्कर्षः मन एव जीवनस्य मूलं भवति। यदि मनः सम्यक् नियन्त्रितं भवति, तर्हि जीवनं सुखदं, सफलं च भवति। यदि मनः चञ्चलं, अशान्तं च भवति, तर्हि व्यक्तिः न सन्तोषं न च सफलतां प्राप्नोति। अतः अस्माभिः मनः संयमितं करणीयम्, ततः जीवनं उत्तमं भविष्यति।

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥"

(भगवद्गीता 2.48)

अस्मिन् श्लोके श्रीकृष्णः वदति यत् समत्वं योग इति। मनः यदि स्थिरं भवति, तर्हि जीवनं सार्थकं भवति। तस्मात् अस्माभिः मनः संयम्य जीवनं साधनीयम्।

यतो धर्मस्ततो जयः

धीरजः कुमारः
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

धर्मस्य स्वरूपं कर्त्तव्याकर्त्तव्ययोः अवधारणरूपकं शास्त्रं धर्म इति कथ्यते। 'अवश्यकरणीयं कार्यमेव धर्मः', ईश्वरसत्तायां विश्वास एव धर्मः, जगतो मूलत्वेन संसृतिनियामकानि तत्त्वानि धर्मः' इति निगद्यते। वेदः सर्वासां विद्यानां मूलभूतः। धर्मस्य मूलं वेद एव। धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा।

अयमेव धर्मः योगदर्शने महर्षिणा पतञ्जलिना यम-शब्देन व्याख्यातः। यथा-

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।

मनुस्मृतौ तथा याज्ञवल्क्यस्मृतावपि धृतिक्षमादयो दश गुणा एव धर्मशब्दवाच्यत्वेन एवं सदाचारोऽपि धर्म इति निर्दिष्टः। यथा-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥(मनु.6/92)

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
सम्यक् संकल्पजः कामो धर्ममूलमिदं स्मृतम्।।(याज्ञ. स्मृ.)

'धार्यते इति धर्मः' महाभारतकारेण व्यासेन जगद्धारकतत्त्वं 'धर्मः' इति निर्दिष्टः। यथा-

धारणाद् धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।
यः स्याद् धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः॥ (महाभारतम्)

धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः - ईश्वरसत्तायां विश्वास एव धर्म इति निगद्यते। धर्म एव जीवनस्य सारः। ये गुणाः अस्मान् मानवान् पशुपक्षिकीटादिभ्यः पृथक् कुर्वन्ति त एव धर्मवचना इति। उक्तं च भर्तृहरिणा-

अहारनिद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।। (हितो. 1/25)

यतो धर्मस्ततो जयः - संसारे मानवानां द्विविधा प्रवृत्तिः जायते। शास्त्रानुकूलव्यवहारो धर्मः, तत्प्रतिकूलस्तु अधर्मः। धर्माश्रयिणां श्रीवृद्धिः प्रयत्नसापेक्षा चिरसाध्या च। शास्त्रेषु पुराणेषु अपि च धर्मस्य महान् महिमा दरीदृश्यते। यथा हितोपदेशे-

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहद्वारि जनाः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे जीवाऽनुगो गच्छति धर्म एकः।। (हितोपदेश)

धर्मो रक्षति रक्षितः। शुक्लयजुर्वेदे - यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् इत्यनेन धर्मो रक्षति रक्षित इति मनुवचनेन च धर्मपालनार्थं धर्मरक्षणार्थ च धर्मलक्षणम् निरूपितम्। यथा-

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद् धर्मस्य लक्षणम् ।।(मनु.2/12)

चतुर्विधधर्मे वेद-स्मृत्यनन्तरं सदाचारोऽपि उदीर्यते। जीवने सदाचारेणैव स्वार्थसिद्धिः स्यात्
यथा-

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।
तस्मादस्मिन् सदायुक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः(मनुस्मृ.1/108)
आचाराद् विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते।
आचारेण तु संयुक्तः सम्पूर्णफलभाग् भवेत्।।(मनु. 1/109)

न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते- ज्येष्ठत्वं श्रेष्ठत्वं च धर्ममूलकम्। धर्मस्य त्वरिता गतिः इत्यनेन ज्ञायते यद् धर्मे देशकालानुरूपं परिवर्तनं सञ्जायते। गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत्।

धर्मस्य मूलं वेद एव। स च वेदः सर्वासां विद्यानां मूलभूतः। वेदवृक्षमाश्रित्य सर्वाणि शास्त्राणि प्रभवन्ति।

सर्वेषां प्राणिनां प्रवृत्तिः सुखार्था न तु दुःखार्था। भगवान् स्वायंभुवो मनुश्च संक्षिप्य तद्भृगवे प्रोवाच। तदिदं लोके मनुस्मृतिनाम्ना प्रथितमस्ति। अस्मिन् मानवे धर्मशास्त्रे भगवता मनुना 1. वर्णधर्मः, 2. आश्रमधर्मो, 3. वर्णाश्रमधर्मो, 4. गुणधर्मो, 5. निमित्तधर्मः, 6. सामान्यधर्मश्चेति' षड्विधो धर्मः प्रतिपादितः। धर्मशास्त्रस्य विषयाः आचार-व्यवहार-प्रायश्चित्तभेदेन त्रिधा विभज्यन्ते। जगति विराजमानस्य धर्मस्य महती प्रतिष्ठा। धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा -विश्ववासिनां जनानामभ्युदयनिःश्रेयससिद्ध्यर्थं स्वावयवार्थ-प्रतिपादकत्वेऽपि धर्मसूत्रं भारतीयानां प्राणभूतवेदस्य बहुत्र बहुष्वर्थेषु प्रयुक्तम्। भारतीयाः सनातनधर्मं दृढं विश्वसन्ति। तदनुसारं वेद एव हिन्दूसंस्कृतेः प्राचीनप्रमाणरूपेण स्वीकृतः। वेदस्य परमं प्रामाण्यं सर्वैरपि स्मृतिकारैर्मन्वादिभिः स्वीकृतमस्ति।

दर्शन-परिचयः

पीयूषः
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

१. किं नाम दर्शनम् ?

धर्मः अर्थः कामो मोक्षः चेति चत्वारः पुरुषार्थाः सन्ति। तेषु मोक्ष एव एतादृशो विषयः अस्ति यम् अधिकृत्य समग्रे संस्कृत-साहित्ये विचाराः प्राप्यन्ते। समस्तम् अपि वैदिक-साहित्यं मोक्ष-प्राप्तेरुपायान् विविध-प्रकारेण विवृणोति। यच्छास्त्रम् एतस्य मोक्षस्य प्राप्त्युपायान् दर्शयति तत् "दर्शनम्" इति पदेन कथ्यते।

यथा अस्मिन् लोके वयं प्रगतिम् इच्छामः तर्हि 'दृष्टिः' अर्थाद् नेत्रम् आवश्यकम्, तथैव यदि वयम् अस्माकं आध्यात्मिकस्य जीवनस्य प्रगतिम् इच्छामः तर्हि 'दर्शनम्' आवश्यकम्। दर्शनविहीनो नरः अन्ध इव भवति।

अतः दर्शनं नाम १. वेदानां सारतत्त्वम्, २. आध्यात्मिकोन्नतेरेकं साधनम्, ३. किञ्चिच्छास्त्रम् इति वक्तुं शक्यते।

२. भारतीय-दर्शनस्य मूलं कुत्र दृश्यते?

संस्कृत-साहित्यक्षेत्रे वेदानाम् अतीव महत्त्वपूर्ण स्थानं विद्यते। यतो हि वेदाः संस्कृत-साहित्ये विद्यमानानां निखिल-ग्रन्थानां मूल-स्रोतांसि वर्तन्ते। धर्मस्य मूलभूतं प्रमाणं वेदा एव। अतो भारतीय-दर्शनस्य मूलं वेदसंहितासु एव दृश्यते। तथा च ब्राह्मण-साहित्ये,

आरण्यक-साहित्ये अपि भारतीयदर्शनस्य मूलम् उपलभ्यते। उपनिषत्-साहित्यं तु दर्शनस्य परमं स्थानम् अस्ति।

३. मानव-जीवनस्य चरमं लक्ष्यं किम् अस्ति?

धर्मः, अर्थः, कामः, मोक्षः, चेति चतुर्वर्गाणां प्राप्तिः मानवजीवनस्य चरमं लक्ष्यम् अस्ति। इमे चत्वारः पुरुषार्थाः पुरुषैः सर्वदा प्रार्थ्यमानाः सन्ति। एतत् प्राप्त्यर्थम् एव पुरुषः अनवरतं प्रयत्नशीलः भवति।

४. एतेषां चतुर्णां पुरुषार्थानां प्राप्तिः कथं भवति?

एतेषां चतुर्णां पुरुषार्थानां प्राप्तिः वेदानां तदङ्गानां, दर्शनानां च अध्ययनेन, तत्र प्रतिपादित-कर्मणाम् अनुष्ठानेन च भवति।

हासः - विलासः

पूर्णिमा
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

१. वर्त्तते हानिकारकम् -

व्याकरणस्य कक्षायां पृष्टवान् गुरुरेकदा।
'धनं ददामि विप्राय' कारकम् इह किं भवेत्।।
तस्य प्रश्नं समाकर्ण्य शिष्यः कश्चिदुवाच यत्।
वाक्ये प्रतीयते ह्यत्र कारकं हानिकारकम्।।

२. पृच्छ्यते वा निमन्त्र्यते ?

सेवाप्रत्याशिनं कश्चित् साक्षात्कर्त्ता तु पृष्टवान्।
कि भवान् मद्यपानं च प्रकरोत्यथवा न वा ?
तस्य तत्प्रश्नमाकर्ण्य प्रत्याशी प्रत्युवाच यत्,
पूर्वं माम् उच्यतां यत् किं प्रश्नोऽयं वा निमन्त्रणम्।।

३. वरम् अन्वेषयाम्यहम्-

कस्मिंश्चित्तु समारोहे युवती सम्भ्रमान्विता,
चतुर्विंशतिवर्षीयां तत्रस्थाम्प्राह कन्यकाम्।
पञ्चघण्टादहं तावत् पतिमन्वेषये परम्,
न जाने क्व गतः श्रीमान् मन उद्विजते मम।
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कुमारी निजगाद यत्,
अहं तु पञ्चभिर्वर्षैः पतिमन्वेषयामि भोः !

४. नरकं गन्तुमिच्छामि

यमलोके नरं कञ्चिद् यमराजस्तु पृष्टवान्,
स्वर्गे वा नरके ब्रूहि कुत्र त्वं गन्तुमिच्छसि।।
तस्य प्रश्नं समाकर्ण्य पुरुषः प्रत्युवाच यत्,
पूर्वं तु ज्ञातुमिच्छामि मम पत्नी क्व वर्त्तते ?।
'सा तु विराजते स्वर्गे' यदैव यम उक्तवान्,
'नरकं गन्तुमिच्छामि' स नर उत्तरं ददौ।।

गच्छ अर्जुन गच्छ ...

अंकुशकाव्यकारः
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

बाणं गृहीत्वा युद्धक्षेत्रं प्रहारयन्तु ...
अयं आत्मा नित्यः भोगी अन्यशरीरे पुनरागमिष्यति,
किन्तु त्वया प्राप्तः क्षत्रियधर्मः,
तस्य धर्मस्य प्रतिष्ठां स्थापयतु .. .
कामं भवान् युद्धे वीरगतिं प्राप्स्यति!
परन्तु त्वं शत्रून् प्राणाश्च हर।
अर्जुन! स्वपुरुषार्थान्त्र दर्शय..
त्वं कुरुक्षेत्रस्य मृत्तिकां रक्तमयीं कुरु

रणभूमौ बहवः शूराः स्थितास्सन्ति ...
परन्तु भवतः रथः अपि देवसुतेन सम्पादितः अस्ति।
रथस्य चक्रस्य अधः विकाराः सन्ति ...
कौरवस्य खड्गेषु भयस्य भावाः आगताः सन्ति
प्रहारं कुरु अर्जुन! इदानीं कौरवसेनानिनः त्वामाहूतवन्तः
दर्शय यत् क्षत्रियेषु कीदृशः रक्तप्रवाहः भवति ?
न भयभीताः मृत्युदण्डात्, प्रत्येकं शिरः छेतुम् उत्सुकाः
चलायमाना एषा प्रकृतिः
नश्वरं शरीरं गच्छति।
परन्तु आत्मा पुनः शरीरं प्राप्नोति ..!!

गच्छ अर्जुन गच्छ ...
बाणं गृहीत्वा, युद्धक्षेत्रे युद्धस्व
कुरुक्षेत्रे संघर्षः व्याप्तः ...
खड्गनिपुणः सर्वे न यथा त्वं जानासि
गच्छ अर्जुन गच्छ
बाणं गृहीत्वा, युद्धक्षेत्रं युद्धस्व।।

महाभारते गीताग्रन्थाः

शृङ्खला शुक्ला
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

महाभारतस्य विषये लोकोक्तिः अस्ति “यन्न भारते तन्न भारते”। महाभारतस्य रचयिता महर्षिवेदव्यासः स्वयमेव कथयति -
धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भारतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।
वयं प्रायः महाभारतस्य भीष्मपर्वणि वर्णितां श्रीमद्भगवद्गीतां पठामः। किन्तु भवन्तः जानन्ति वा महाभारते विभिन्नेषु पर्वसु अनेकगीताः अनेकावसरेषु कथिताः सन्ति।
महाभारते श्रीमद्भगवद्गीतामतिरिच्य पञ्चदशगीताः वर्णिताः। तासां नामानि, पर्वाणि, अध्यायाः अधो दत्ताः सन्ति।

नाम	**पर्व**	**अध्यायाः**
1) श्रीमद्भगवद्गीता	भीष्म	25 -42
2) उतथ्यगीता	शान्ति	90 - 91
3) वामनगीता	शान्ति	92 - 94
4) ऋषभगीता	शान्ति	125 – 127
5)षड्जगीता	शान्ति	167
6) शम्पाकगीता	शान्ति	176
7) मंकिगीता	शान्ति	177
8) बोध्यगीता	शान्ति	178
9) विचक्ष्णुगीता	शान्ति	265
10) हारीतगीता	शान्ति	279
11) पराशरगीता	शान्ति	279 - 280
12) वृत्रगीता	शान्ति	280 - 298
13) हंसगीता	शान्ति	299
14) ब्रह्मगीता	अनुशासन	35
15) अनुगीता	आश्वमेधिक	16 - 51
16) ब्राह्मणगीता	आश्वमेधिक	20 - 34

संस्कृतवाङ्मये दशत्रयी

अङ्किकतकुमार:
स्नातकद्वितीयवर्ष: संस्कृतविशेष:

1. बृहत्त्रयी
किरातार्जुनीयम् - भारविः
शिशुपालवधम् - माघः
नैषधीयचरितम् -श्री हर्षः

2. लघुत्रयी-
कुमारसम्भवम् - कालिदासः
रघुवंशम् - कालिदासः
मेघदूतम् - कालिदासः

3. गद्यबृहत्त्रयी-
वासवदत्ता - सुबन्धुः
दसकुमारचरितम् - दण्डी
कादम्बरी - बाणभट्टः

4. उपजीव्यग्रन्थत्रयी-
रामायणम् - वाल्मीकिः
महाभारतम् - वेदव्यासः
भागवतपुराणम् - वेदव्यासः

5. मुनित्रयी-
पाणिनि- अष्टाध्यायी, पातालविजयम्
कात्यायनः -वार्तिकम्, स्वर्गारोहणम्
पतञ्जलिः - महाभाष्यम्, महानन्दकाव्यम्

6. पुराषार्थत्रयी - धर्मः, अर्थः, कामः

7. पाषाणत्रयी -
भारविप्रणीतकिरातार्जुनीयस्य प्रथमद्वितीयतृतीयसर्गाः

8. गुणत्रयी - सत्वं, रजस्, तमस्।

9. प्रस्थानत्रयी -
ब्रह्मसूत्रम् - बादरायणः
गीता - श्री वेदव्यासः
उपनिषदः - श्री वेदव्यासः

10. वेदत्रयी -
ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद

उपनिषत्सु चतुर्महावाक्यानि

पीयूष:
स्नातकद्वितीयवर्ष: संस्कृतविशेष:

यद्यपि महावाक्यानि बहूनि सन्ति तथापि चतुर्णां वेदानां प्रतिनिधिभूतानि चत्वारि महावाक्यानि इमानि सन्ति।

महावाक्यम्	महावाक्यानां प्रकारः	महावाक्यानां सन्दर्भः
1. प्रज्ञानं ब्रह्म	1.लक्षणवाक्यम्	1. ऋग्वेदः – ऐतरेयोपनिषत्(१.२)
2. अहं ब्रह्मास्मि	2. अनुभववाक्यम्	2.यजुर्वेदः - बृहदारण्यकोपनिषत् (१.४.१०)
3. तत्त्वमसि	3. उपदेशवाक्यम्	3.सामवेदः – छान्दोग्योपनिषत् (६.८.७)
4. अयमात्मा ब्रह्म	4. साक्षात्कारवाक्यम्	4.अथर्ववेदः - माण्डूक्योपनिषत् (१.२)

मम प्रियकविः कालिदासः

ॐकारनाथ झा
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

कालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य महाकविः वर्तते। सः विश्वस्य महापुरुषोऽपि विद्यते। तस्य कीर्ति न केवलं भारतवर्षे अपितु समस्ते संसारे विस्तृता अस्ति। महाकविः कालिदासः संस्कृतसाहित्ये अतीव लोकप्रियः अस्ति। जनाः तं 'स्वस्व-प्रदेशवासी' कथयन्ति। अस्य महापुरुषस्य स्थितिकालस्य सम्बन्धे विविधानि मतानि सन्ति। केचित् तं गुप्तकाले ई० चतुर्थशताब्द्यां मन्यन्ते। अपरे विद्वांसः कथयन्ति यत् कालिदासः ई० षष्ठ-शताब्द्यां समभवत्। किन्तु विदुषां बहुमतं ई० पूर्व- प्रथम-शताब्द्यां विक्रमादित्यस्थकाले स्वीकरोति। महाकविकालिदासेन महाकाव्यद्वयं विरचितं कुमारसम्भवं रघुवंशं च।

कुमारसम्भवमहाकाव्ये शिवपार्वत्योः विवाहस्य, कार्तिकेयोत्पत्तेः, तारकासुरवधस्य च कथा वर्णिता अस्ति। एषा रचना मनोहरा वर्तते। अस्मिन् काव्ये कवेः मान्यता अस्ति यद् वासनाजनितं क्षणिकं च प्रेम दुःखाय एव भवति। वास्तविकस्य स्नेहस्य उपलब्धिः तु तपस्यां विना न सम्भवति। अस्य अपरं काव्यं रघुवंशं वर्तते। अस्य एकोनविंशतिसर्गेषु रामायणस्य कथानकम् अस्ति। अस्य भाषा अपि सरला सुबोधा च वर्तते। संस्कृत-भाषायाः अनेके ग्रन्थकाराः सुभाषितकाराश्च कालिदास रघुवंशकार इति नाम्ना एव जानन्ति। कालिदासस्य शैली अद्वितीया वर्तते। स नवरसेन अप्रसिद्धं कथानकम् अपि अतिरुचिकरं करोति। अनया सर्वतोमुखीप्रतिभया कालिदासस्य विश्वसाहित्ये असाधारणं स्थानं विद्यते। पाश्चात्यविद्वांसः तु अस्य कवेः तुलनां शेक्सपीयरमहाभागेन कुर्वन्ति। कालिदासेन त्रीणि रूपकाणि अपि विरचितानि मालविकाग्निमित्रं, विक्रमोर्वशीयम्, अभिज्ञानशाकुन्तलं च। अभिज्ञानशाकुन्तलं तु सप्तांकपूर्णं श्रेष्ठरूपकम् अस्ति। अस्मिन् दुष्यन्तस्य शकुन्तलायाश्च प्रणयस्य वियोगस्य पुनर्मिलनस्य च कथा वर्णिता वर्तते।

कालिदासेन ऋतुसंहारं मेघदूतं चेति द्वयं गीतिकाव्यम् अपि विरचितम्। मेघदूतस्य अनुकरणे तु अनेकानां दूतकाव्यानां निर्माणं जातम्। उपमा कालिदासस्य इति आभाणकम् अतीव प्रसिद्धम् अस्ति। तस्य उपमासु अनुरूपता, सरसता अपूर्वता च विद्यते। अद्यापि कालिदासस्य कृतिषु तादृगेव माधुर्यं वर्तते यादृक् पूर्वम् आसीत्। अत एव एषा भणितिः समालोचकेषु सुष्ठु विद्यते-

पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावात् अनामिका सार्थवती बभूव ॥

संस्कृतलोकोक्तिभिः निर्मिताः हिन्दीमुहावराः

पलकपाण्डेयः
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

• काला अच्छर भैंस बराबर।
अक्षराणि विचित्राणि ये न जानन्ति मानवाः।
बलीवर्दसमास्ते तु खुरशृङ्गविवर्जिताः॥
-चाणक्यराजनीतिशास्त्रम्। ११२४॥

• लोहे से लोहा कटता है।
आयसैरायसं छेद्यम्
-कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्। २३२॥

• भैंस के आगे बीन बजाना।
उपवीणित एष गर्दभः
समुपश्लोकित एष वानरः।
पयसि श्रुत एष माहिषे
सहकारस्य रसो निपातितः॥
-पादताडितकम्। १३१॥

प्रश्नोपनिषत्सारः

-प्रेमजीतः
स्नातकतृतीयवर्षः, संस्कृतविभागः

अथर्ववेदीयेयमुपनिषत् पिप्पलादतच्छिष्यानां च संवादरूपा। अत्र षट्सङ्ख्याकाः शिष्याः पिप्पलादं यथाविधि उपगम्य ब्रह्मविद्यां बोधवितुं प्रार्थयन्ते। तानुद्दिश्य पिप्पलादर्षि उवाच भवन्तः सर्वे तपस्विनः ब्रह्मचर्यव्रतं पालयित्वा वेदान् अधीतवन्तः इति जाने अहम्। तथापि ममाश्रमे श्रद्धया ब्रह्मचर्यपूर्वकम् एकं वर्षं यावत् पुनः तपः चरन्तु। ततः परं यथाभिलाषं ब्रह्मजिज्ञासां कुर्वन्तु अहं यथामति बोधयिष्यामि इति। तथैव कृत्वा वर्षानन्तरं शिष्याः (सुकेशाः भारद्वाजः, शैब्यः सत्यकामः, सौर्यायणी गार्ग्यः, कौसल्यः आश्वलायनः, वैदर्भी भार्गवः, कवन्धी कात्यायनः) आगच्छन्ति।

तत्र प्रथमं तावत् कबन्धी कात्यायनं पृच्छति, यस्मादिदं चराचरं जगत् उत्पद्यते, तस्य कारणभूतं तत्त्वं किम् इति। तस्य प्रश्नं श्रुत्वा गुरुः ब्रूते - स्रष्टुकामः प्रजापतिः एकोऽहं बहुस्यामिति चिन्तयन् सङ्कल्पमात्रेण प्राणरयिनामकं शक्तिद्वयं सृजति। तत्र प्राणः आदित्यरूपः, रयिः चन्द्रमारूपा मूर्तामूर्तरूपत्वात् मूर्तिरेव रयिः। प्रत्यक्षं यदिदं दृश्यते जगत् तत् रयिप्राणयोः संयोगेनैव सकलं सुचरितमस्तीति अवगन्तव्यम्। सूर्यः सम्पूर्णस्य जगतः प्राणबिन्दुरिति कारणात् सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च। सूर्यादेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते इति सूर्योपनिषदि। चन्द्रमाः स्थावरजङ्गमात्मकं सम्पूर्णं स्थूलजगत् अस्य चन्द्रमसः सोमशक्तेः कारणात् परिपुष्टं भवति। अस्माकं जीवनस्य सर्वकालेषु अपि सूर्यचन्द्रमसोरेव क्रीडा (प्रभावः) भवति इति दर्शयितुम् उत्तरायणदक्षिणायणरूपेण, अहोरात्ररूपेण च व्याप्तत्वम् उच्यते।

द्वितीयेन प्रश्नेन तावत् भार्गवः पिप्पलादं पृच्छति, कति देवाः प्रजानां स्थूलशरीरं धारयन्ति, तेषु वरिष्ठः देवः कः इति। तदानीं प्राणतत्त्वं बोधयति। प्राण एव वायु-अग्नि-आदिदेवेषु वरिष्ठः। यावत्कालं प्राणः देहे आस्ते तावदेव अन्ये देवाः (इन्द्रियाणि) तमधिकृत्य क्रियाशीलाः भवन्ति। तस्य शरीरान्निस्सरणानन्तरम् अन्ये निष्क्रियाः भवन्ति। अतः कारणात् अरा इव रथनाभौ प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम् इति प्राणस्य स्तुतिं कुर्वन्ति अन्ये देवाः।

तृतीयेन प्रश्नेन आश्वलायनः प्राणस्य उत्पत्तिः, देहप्रवेशः, देहधारणं, देहादूर्वोत्क्रमणमित्यादि प्रणसम्बद्धान् विषयान् पृच्छति। तदा पिप्पलादः ब्रूते - आत्मनः सकाशादेव प्राणः जायते। पुरुषं यथा छाया अनुवर्तते तथैव मनोकृतेन सङ्कल्पेन एषः प्राणः जीवमनुप्रविशति। विविधकर्माणि कर्तुं जीवं धारयितुं च एषः पञ्चस्थानेषु तिष्ठति "हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः। उदानः कण्ठदेशस्थो व्यानः सर्वशरीरगः" इत्यमरः।

प्राणः सम्राडिव सर्वान् प्राणान् तत्तत्कार्ये विधत्ते। अपानः पुरुषं दृढं धारयति यथा न पतेत् भूमौ। हुतमन्नं जीर्णीकरोति समानः। सर्वासु नाडीषु सञ्चरति व्यानः। उदानः यथासङ्कल्पम् ऊर्ध्वं पुण्यं लोकं नयति मरणानन्तरम्।

चतुर्थे प्रश्ने सौर्यायणी गार्ग्यः पुरुषे सुप्ते कानि स्वपन्ति कानि च जागृतानि भवन्ति, कः देवः स्वप्नान् पश्यति, कः सुखमनुभवति, कस्मिन् अन्ये देवाः सम्प्रतिष्ठिता भवन्ति इति। तदा उत्तरं ब्रवीति गुरुः - सर्वाणि देवभूतानि इन्द्रियाणि मनसि सम्पन्नानि भवन्ति यथा सूर्यास्तकाले सर्वाणि किरणानि सूर्ये लयमाप्नुवन्ति तथैव। तदा प्राणाग्नयः पञ्चसंख्यकाः एव जागृताः भवन्ति। अस्यामवस्थायां जीवः एव स्वप्नान् पश्यति। स एव सुखमनुभवति। अस्य उच्छवासनिश्श्वासावेव प्राणाग्निहोत्रे आहुती भवतः।

पञ्चमेन प्रश्नेन सत्यकामः पृच्छति यः आजीवनम् ओङ्कारमुपास्ते सः कतरं लोकं प्राप्नोति ? कीदृशं फलं प्राप्नोति ? तस्य उत्तरं पठति -परमपावनस्य ओङ्कारस्य लक्ष्यभूतमस्ति परब्रह्म। यः निष्कामेन उपास्ते सः सकलैश्वर्यं प्राप्नोति। तत्रापि यः एकमात्रां ध्यायति तम् ऋचः मनुष्यलोके सर्वविधसम्पदं प्रापयन्ति। यः द्विमात्रेण ध्यायति तं यजुः सोमलोकं प्रति उन्नयति तत्र सः विभूतिमनुभवति। यश्च त्रिमात्रेण उपास्ते सः तेजसि अर्थात् द्युलोके सम्पन्नो सर्वपाप्मविनिर्मुक्तः भवति। अतः एतदहस्यं ज्ञात्वा उपास्ते यः स परं पदं प्राप्नोति न पुनरावर्तते।

षष्ठे प्रश्ने सुकेशाः भारद्वाजः प्रश्नं पृच्छति यत् कोशलदेशस्य राजकुमारः हिरण्यनाभः एकदा षोडशकला-सम्पन्नस्य पुरुषस्य विषये मां पृष्टवान्। अहम् अनभिज्ञः इति ज्ञात्वा सः रथमारुह्य प्रतिगतवान्। अतः अहं त्वां पृच्छामि कोऽसौ षोडशकलायुक्तः पुरुषः इति। उत्तरं पठति - पुरुषे एव एते षोडशकलाः संहताः यथा रथनाभौ अराः तथा। सः पुरुषः प्राणमसृजत। सृष्टेः श्रेयसे प्राणात् श्रद्धाम् असृजत। ततः पञ्चभूतानि। तत्र श्रूयते स प्राणमसृजत, प्राणात् श्रद्धां खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवीन्द्रियं मनोऽन्नमन्नाद् वीर्यं तपो मन्त्राः कर्म लोका लोकेषु च नाम च। तदनन्तरं गुरुः ब्रूते एतावदेवाहमेतत्परं वेद नातः परमस्तीति। तदा सर्वे शिष्याः सविनयं गुरुस्तवनं कुर्वन्ति - त्वं हि नः पिता यः अस्माकमविद्यायाः परं पारं तारयसीति।

क्रीडावल्ली

राखी
प्रथमवर्षीया, संस्कृतविभागः

कन्दुकप्रेषणम् : बालानां गणद्वयं करणीयम्। प्रतिगणं बालानां संख्या समाना भवेत्। सर्वेऽपि बालाः गणे एकस्य पृष्ठतः अपरः इति क्रमेण तिष्ठेयुः। शिक्षकः प्रत्येकं गणस्य पुरतः स्थितस्य बालस्य हस्ते कन्दुकम् (अन्यत् किमपि वस्तु वा) दद्यात्। यदा सूचनारवः भवति तदा क्रीडालुः स्वस्य हस्ते विद्यमानं कन्दुकं द्वितीयस्य हस्ते दद्यात्। परन्तु दानात्पूर्वं 'मम नाम....' इति उक्त्वा दद्यात्। द्वितीयोऽपि स्वनाम उक्त्वा एव तृतीयस्य हस्ते कन्दुकं दद्यात्। एवं तृतीयः चतुर्थस्य हस्ते, चतुर्थः पञ्चमस्य हस्ते.. ततः अग्रेऽपि। यदि मध्ये कोऽपि स्वस्य नाम अनुक्त्वा केवलं कन्दुकं ददाति तर्हि तेन गणेन अङ्काः न प्राप्यन्ते। गणीयेषु अन्तिमः अन्ते स्वस्य नाम उक्त्वा कन्दुकं शिक्षकाय दद्यात्। यः गणः आदौ शिक्षकाय कन्दुकम् अर्पयति तस्य गणस्य जयः भवति।

फलग्रहणम् : शिक्षकः केभ्यश्चित् बालेभ्यः फलानां नामानि ददाति। यथा आम्रम्, दाडिमम्, पनसम्, नारङ्गम् इत्यादिकम्। तानि नामानि सर्वेऽपि क्रीडकाः जानीयुः स्मरेयुः च। क्रीडारम्भे सर्वे निश्चितक्षेत्रे धावन्ति। शिक्षकः कस्यचित् फलस्य नाम उच्चैः घोषयति। तदा सर्वे बालाः यः तत्फलनाम्ना निर्दिष्टः अस्ति तं स्प्रष्टुं धावेयुः। तावता शिक्षकः अन्यस्य फलस्य नाम वदति। एते अधुना तं स्प्रष्टुं धावेयुः। एवं शिक्षकः मध्ये मध्ये अन्यत् अन्यदेव नाम घोषयन् भवति। सः यस्य नाम वदति तत् 'फलम्' स्प्रष्टुं सर्वे धावन्ति। यदि सः स्पृष्टः भवति तर्हि बाह्यः इत्यर्थः।

संस्कृतसाहित्येतिहासग्रन्थाः

सुनीलः
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

संस्कृतसाहित्यस्य इतिहासज्ञानमतीवमहत्त्वपूर्णमस्ति। विषयेऽस्मिन् विद्वद्भिः अनेकानि पुस्तकानि रचितानि। तेषु पुस्तकेषु वेद-ब्राह्मणारण्यकवेदाङ्गादिकाव्यरामायणेतिहासकाव्यमहाभारतपुराणलौकिकमहाकाव्यखण्डकाव्यगीतिकाव्यरूपकगद्यकाव्यादिविविध-शास्त्राणां विवरणं दत्तमस्ति। अनेकपाश्चात्यपौरस्त्यविद्वांसः एतत् विषयमधिकृत्य समुचिततथ्यपूर्णपुस्तकानि विरचितवन्तः। यदा जानीमः अल्पश्च कालो बहवश्च विघ्नाः इति सूक्तिरस्ति। अतः एतस्यां सूच्यां महत्वपूर्णपाठ्यपुस्तकानि दत्तानि सन्ति -

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास (बलदेव उपाध्याय)
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास (डॉ. उमाशंकर शर्मा "ऋषि")
3. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास (कपिलदेव द्विवेदी)
4. वैदिक साहित्य का इतिहास (पारस नाथ द्विवेदी)
5. वैदिक साहित्य का इतिहास (बलदेव उपाध्याय)
6. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति (कपिलदेव द्विवेदी)
7. संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास (बलदेव उपाध्याय)
8. संस्कृत साहित्य इतिहास NCERT (कमलाकांत मिश्र)
9. संस्कृतवाङ्मय का विवेचनात्मक इतिहास - सूर्यकान्त
10. संस्कृतसाहित्य का समग्र इतिहास (१-४ भाग) - राधावल्लभ त्रिपाठी
11. संस्कृतशास्त्रों का इतिहास - बलदेव उपाध्याय
12. संस्कृत साहित्य का इतिहास (वैदिकखंड, लौकिक खंड) - प्रीति प्रभा गोयल
13. संस्कृतसाहित्यविमर्शः - सूर्यकान्तस्नातकः
14. वैदिक संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास - कुन्दनलाल शर्मा

महाभारतस्य प्रणेता

कुमार आदर्श:
स्नातकतृतीयवर्षीयः, संस्कृतविभागः

महाभारतस्य प्रणेता कृष्णद्वैपायनाभिधानो महर्विर्वेदव्यासः सत्यवतीगर्भसम्भूतः पराशरमहर्षेरात्मजः। अलौकिकोऽयं जन्मवृत्तान्तः, तत्र चार्षः प्रभावो ज्ञातव्यः।

लोके किवदन्तीयं प्रचरति यत् कृष्णद्वैपायनो धीवरजातीयकन्यामा मत्स्यगन्धाया उत्पन्नः। ऋषि पराशरः कदाचित्तां दृष्ट्वा मुह्यन् सन्तानार्थाय परिजग्राहेति।

इदानीं तथ्यमुच्यते-महाभारते आदिपर्वणि अष्टपञ्चाशत्तमाध्याये स्वयं वेदव्यासः पराशरात्मजः स्वजन्मवृत्तान्तं वर्णितवान्। तस्य संक्षिप्तमुपाख्यानम् - यथा तदीया माता सत्यवती मत्स्यगन्यापरनामा दाशराजद्वारा पालिता, उपरिचरवमुनामक चेदिराजस्य शुक्रसम्भूताः अद्रिकानामाप्सरोगर्भसम्भूता। इयमद्रिका शापवशात् मत्स्यदेहधारिणी यमुनायां निवसति स्म। सा कदाचित् उपरिचरराजस्य शुक्रं श्येनमुखाद् भ्रष्टं यमुनाजले पतितं भक्षयित्वा सन्तानद्वयं जनयामास। एको मलयनामकः पुत्रः, अन्या च मत्स्यगन्धा नाम कन्या। स उपरिचरराजः धीवरप्रदत्तं मत्स्यपुत्रत्वेन जग्राह। तञ्च देशान्तरे सत्यनिष्ठं धार्मिक पुरुषं राजपदे प्रतिष्ठापयामास। मत्स्यगन्याञ्च यमुनाजले धीबरवृत्ति धारयते धीवराय दत्तवान्। अयं धीवर एवाद्रिकां मत्स्यरूपिणीं जालद्वारा धृत्वा तदुत्तरात् सन्तानद्वयं प्राप्तवान्। अद्रिकापि सद्य एवाप्सरोरूपं पुनः प्राप्तं तथैव शापवचनप्रभावात्। धीवरश्च मत्स्यगन्ध गृहीत्वा स्वयमनपत्यतया तामेव सन्तानस्नेहेन पालयामास।

कदाचित्तरणीं वाहयन्ती यमुनाजले मुनिना पराशरेण सा दृष्टा। मुनिश्च तामनित्यरूपां सत्यवती निरीक्ष्य तस्याः प्रकृतस्वरूपं दिव्यदृष्ट्यावगत्य योग्यक्षेत्रञ्च विविच्य तां चकमे। सा तु यमुनायाः परपारे बहूनामुषीणां दर्शनात् लज्जावनता पराशरं ज्ञापयामास यत् प्रकाश्यस्थाने कथमावयोर्मेलनं सम्भवेत् ? ततः पराशरः आर्यप्रभावेण कुज्झटिकामयं नीहारषुञ्जमसृजत्। तथापि सा मत्स्यगन्धा कन्याभावदूषणभयान्न पराशरमभजत्। ततोऽसौ मुनिस्तस्यै गात्रसौगन्ध्यमुत्तमं दत्त्वा तां गन्धवतीं योजनगन्धां वा कृत्वा सन्तोष्य तत्रैव द्वीपे तस्यां यमुनान्तर्वत्तिनि स्वं वीजं निचिक्षेप। सा सद्यो गर्भं दधार सुषाव च पुत्रमेकम्। तेन च द्वैपायनस्य जन्म बभूव।

एवं द्वैपायनो जज्ञे सत्यवत्यां पराशरात्। न्यस्तो द्वीपे स यद्वालस्तस्माद् द्वैपायनः स्मृतः (आदि० ५०-१६५) कृष्णवर्णत्वात् कृष्णद्वैपायन इति नाम बभार। तत्रैव यमुनाद्वीपे स वर्धमानः वीर्यवान् भूत्वा मातुरनुज्ञां प्राप्य तपसि मनो दधे। पूर्वं सर्वे वेदा अविभक्ता आसन्। कृष्णद्वैपायनेन वेदानाम् ऋक्सामयजुरयर्ववेदानामपि विभागाः कृताः तथा ब्राह्मणभागात् संहिताभानान् पृथक् कृत्वा ततश्च शाखादिभेदेन वेदान् विस्तारितवान्। तस्य च शिष्याः सुमन्तुः जैमिनिः पैलः स्वकीयः पुत्रः शुकः तथा वैशम्पायनश्चैते पञ्च वेदचतुष्टयं महाभारतपञ्चमं चाप्यापिताः।

श्लोकान्त्याक्षरीश्लोकसङ्ग्रहः

-अजय कुमारः
स्नातकद्वितीयवर्षीयः, संस्कृतविभागः

त-
त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविड़ं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

व-
वशिष्ठ कुम्भोद्भवगौतमार्य,
मुनीन्द्र देवार्चितशेखराय।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय,
तस्मै व काराय नमः शिवाय।।

य-
यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता,
साऽप्यन्यमिच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः।
अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या,
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च।।
च-
चैतन्यं सुमनं मनं मन मनं मानं मनं मानसं,
माया धाव धवं धवं धव धवं धावं धवं माधवम्।।
स्वाहाचार चरं चरं चर चरं चारं चरं वाचरम्,
वैकुण्ठादि भवं भवं भव भवं भावं भवं शाम्भवं।।

म-
मज्जत्वम्भसि यातु मेरुशिखरं शत्रुञ्जयत्वाहवे,
वाणिज्यं कृषिसेवनादि सकलाः विद्याः कला शिक्षतु।
आकाशं विपुलं प्रयातु खगवत् कृत्वा प्रयलं परः,
नाभाव्यं भवतीह कर्मवशतो भाव्यस्य नाशः कुतः।।
त-
ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं,
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये,
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणि।।
न-
नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम् ॥
म-
मूलरामायणं पम्परामायणं,
कम्बरामायणं येनरामायणं l
कृत्तिवासादि रामायणं श्रावयद्,
भूतले भाति मे नारतं भारतम् ll
म-
मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं,
रूपं परं दर्शितमात्मयोगात्।
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं,
यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम्।।
म-
मानवा मानितं दानवा बाधितं,
निर्जरा राधितं सज्जनाः साधितं।
पण्डितैः पूजितं पक्षिभिः कूजितं,
भूतले भाति मे नारतं भारतम्।।
म-
मनोबुद्ध्यहङ्कार चित्तानि नाहं
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुः
चिदानन्दरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम्।।
म-
मन्दिरैः मस्जिदैः चेत्यगिरजागृहे
रार्यगेहे गुरुद्वारकैर्भ्राजितं।
कर्मभूः शर्मभूः मर्मभूः धर्मभूः
भूतले भाति मे नारतं भारतम्।।
म-
मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय
नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै म काराय नमः शिवाय।।
य-
यक्षस्वरुपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै य काराय नमः शिवाय।।
य-
यास्यत्यद्य शंकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठ्या,
कंठस्तंभितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यम् मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः,
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनया विश्लेषदुःखैर्नवैः।।
व-
विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्,
विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते न हि धनं विद्या विहीनः पशुः॥
श-
श्रीदयानंदगान्ध्युज्ज्वलं गुर्जरं,
स्वर्णबंगविवेकारविन्दोज्ज्वलम्।
नानकाद्युज्ज्वलं पञ्चतोयं दधत्,
भूतले भाति मेऽनारतं भारतम्।।

म-
मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवतः,
तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः,
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता।।
त-
त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण,
स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम,
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप।।
प-
पापान्निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं निगूहति गुणान्प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः॥

आयुर्वेदस्य मूलभूत सिद्धान्तः

अमित कुमारः
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

आयुर्वेदशब्दः एतयोः शब्दयोः आयुः + वेदयोः संयोगेन निर्मितः। तस्य निरुक्तितः "आयुषो वेदः" अर्थात् वयवेदः इत्यर्थः।

सिद्धान्तनो नाम साह याह परन्तैरार् बहुविधं परीक्ष्य हेतुभिश्च साधयित्वा स्थाप्यते निरयनः"।

अत एव आयुर्वेदस्य सिद्धान्ताः सर्वदा अविकारी स्थिराः च भवन्ति। आयुर्वेदस्य मौलिकसिद्धान्ताः यथा।

१ त्रिगुणे

आयुर्वेदे त्रिगुणस्य महत्त्वपूर्णं स्थानम् अस्ति। एते त्रयः गुणाः – सत्त्वं, रजः, तमश्च – प्रकृतौ विद्यन्ते। सत्त्वरजतमस्त्रिगुणानां सन्तुलनं प्रकृतिः इति न अतिशयोक्तिः। एतत् सांख्यदर्शने सिद्धम्।जगति सर्वाणि वस्तूनि त्रिगुणानि सन्ति। एते त्रयः गुणाः समस्तस्य जगतः कार्याणां प्रवर्तकाः सन्ति। तेषां संयोगं विना कोऽपि कार्यं न सम्भवति। आयुर्वेदे रज-तम-गुणाः मानसदोषस्य कारणं मन्यन्ते, यतः एतेभ्यः दोषेभ्यः जीवेषु मानसिकदोषाः उत्पद्यन्ते।चक्रपाणीमते वायुः, पित्तं कफश्च शारीरिकदोषाः, मानसिकदोषाश्च रजः, तामसः च भवन्ति, एतेषु सत्त्वगुणः सर्वथा शुद्धः विकाररहितः इति मन्यते।

२ पञ्चमहाभूते

पञ्चमहाभूतं नाम पृथिव्यप्तेजवाय्वाकाशानि। चरकाचार्यस्य मते पञ्चभूतस्य कारणानि द्रव्याणि, नित्यं, अनन्तं, इन्द्रियेभ्यः परं च भवन्ति। पंचमहाभूतं जगतः स्थावरजङ्गमानां सर्वेषां प्रजापतिः। प्रत्येकं वस्तुनः यो गुणो भवति सः एतेषां पञ्चानां महातत्त्वानां प्राधान्यादेव।

३ त्रिदोषः

यद्यपि मनुष्यशरीरं पञ्चधातुभ्यः निर्मितं तथापि तस्य कार्यं केवलं जलं, अग्निः, वायुः इति त्रिधातुभिः एव भवति।अस्मिन् समग्रे जगति एतानि त्रीणि तत्वानि प्राकृतिकरूपेण भौतिकरूपेण सूर्यचन्द्रवायुरूपेण वातः (वायुः), पित्तं (सूर्यः) कफश्च (जल) शरीरस्य कार्याणि चालयन्ति।

दूषयन्ति मनः शरीरं च इति दोषाः'

दूषनात् दोषाः धारणात् धातवः

चिकित्सापदार्थे त्रिदोष इत्यर्थः रोगावस्थायां वातः, पित्तं, कफः च मिलित्वा त्रिदोष इति कथ्यते। वातदोषाः असन्तुलितावस्थायां रोगं जनयन्ति, सन्तुलितावस्थायां च स्वास्थ्यं प्रददति। अस्वस्थं शरीरं स्वस्थं कर्तुं त्रयोऽपि दोषाः सन्तुलने आनेतुं आवश्यकम् इति। आयुर्वैदिकचिकित्सायाः उत्पत्तिः।

४ सप्तधातुः

'एते शरीराधरनद धातव इतुच्यन्ते'।

शरीरस्य निर्माणे तेषां प्रमुखा भूमिका भवति, यतः ते शरीरे तादृशानि तत्त्वानि निर्मान्ति, ये शरीरस्य पोषणं कुर्वन्ति। धातुसंख्यया क्रमश्च नियतं भवति, यतः पूर्वधातुनां आवश्यकतत्त्वेभ्यः अनन्तरं धातुतत्त्वानि निर्मीयन्ते। सप्तधातुः यथा - रक्तधातुः, मांसधातुः, मेदधातुः, अस्थिधातुः, मज्जाधातुः, शुक्र(वीर्य)धातुश्च दृश्यते।

५ त्रयोदशाग्निः

पंचमहाभूतं, सप्तधातु इत्यादि शरीरोत्पत्तिकारणात् मानवशरीरे त्रयोदशप्रकाराग्नयः वहन्ति। एतेषां सर्वेषां अग्नीनां कार्यं शरीरस्य स्वास्थ्यरक्षणं भवति।एतेषां सर्वेषां संचालनं नियन्त्रणं वा जठराग्नेः हस्ते भवति। त्रयोदशाग्नयः मनुष्यशरीरे वर्तमानाः। यथा – एकः जठराग्निः, पञ्च भूताग्नयः, सप्त धात्वग्नयश्च।

५.१ जठराग्निः - सामान्यतया पाचनवह्निः इति वक्तुं शक्यते। अस्य आश्रयः मानवशरीरस्य उदरस्य, क्षुद्रान्त्रस्य, बृहदान्त्रस्य च मध्ये नाभिप्रदेशः इति मन्यते। जठराग्निः मनुष्यस्य भक्षितं भोजनं यथाशक्ति पचति।

५.२ भूताग्नयः - पञ्चभूताग्नयः पच्यमानान् अन्नं स्वमहाभूतानुसारेण रसरूपेण परिणमयित्वा पचन्ति।अयं भूताग्निसमूहः मानवशरीरस्य यकृत्भागे वर्तते तथा च अन्नं पञ्चाङ्गेषु विभज्य स्वस्वमहाभूतैः सह मिलित्वा शरीरस्य सम्पूर्णं पोषणं समृद्धिं च प्रददाति।

५.३ धात्वग्निः - एते सप्तधात्वग्नयः पच्यमानं भोजनं स्वस्वधातुविषयानुसारं तस्य सामग्रीं परिवर्त्य पुनः पचन्ति। एतेषां धात्वग्नीनां तीव्रीकरणेन तत्सम्बद्धस्य धातुवृद्धिः भवति, तेषां मन्दतायाः कारणेन तत्सम्बद्धस्य धातोः क्षयः भवति। यस्मात् कारणात् विकारादयः रोगाः उत्पद्यन्ते।

6.त्रिमूलः

अन्नस्य सारं धात्वग्नि-पञ्चभूतादिकं च सृजति पोषयति। तत्रैव मलद्रव्यं निर्मीयते। यतो हि मलद्रव्यं मनुष्यशरीरं दूषयित्वा रोगग्रस्तं करोति। अतः एते विष्ठा इति उच्यन्ते। एते मलपदार्थाः मानवशरीरस्य स्वस्थतायै हानिकारकाः भवन्ति। अतः तेषां विसर्जनम् आवश्यकम् अस्ति। सामान्यतया मलद्रव्यं शरीरात् मूत्राङ्गं प्रति प्राकृतिकप्रक्रियाद्वारा गच्छति। यदि केनचित् कारणेन एतत् न भवति तर्हि तेषां निष्कासनार्थं प्रयत्नः करणीयः। मल-मूत्र-स्वेद-नख-केश-शरीर-अपशिष्ट-श्लेष्मादीनि सर्वाणि अपशिष्टानि सन्ति।

६.१. पुरीषः- अन्नस्य पाचनात् अवशिष्टस्य अशरभागस्य अतिरिक्तं ऊतकैः निष्कासितानां अपशिष्टानां संयोजनेन शरीरे पुरीषपदार्थः निर्मीयते।

६.२. मूत्रम् :- मनुष्यशरीरस्य आर्द्रता मूत्रद्वारा एव नियन्त्रिता भवति। केवलं अपशिष्टानि वा शरीरस्य द्रवभागाः मूत्रेण निष्कासिताः भवन्ति।

6.3 स्वेदः :- स्वेदः शरीरे एकः स्वाभाविकः प्रक्रिया अस्ति। एतेन शरीरस्य अपशिष्टानि शरीरात् निष्कास्य त्वक् सुन्दरं मृदु च भवति। यस्मात् कारणात् शिशिर-ग्रीष्म-ऋतुयोः शरीरस्य तापः समान एव तिष्ठति।

एते आयुर्वेदस्य मूलभूतसिद्धान्ताः मानवशरीरस्य आयुः परिपालयन्ति, तस्य संवर्धनं च कुर्वन्ति। आयुर्वेदस्य त्रिदोषः, सप्तधातुः, पञ्चमहाभूतः, मलः च केनचित् रूपेण वा शरीरस्य पोषणं कुर्वन्ति तथा च यदि ते विक्षिप्ताः भवन्ति तर्हि जीवनस्य अपि नाशं कुर्वन्ति। अतः एतेषां सन्तुलनं मानवशरीरे अतीव महत्त्वपूर्णम् अस्ति।

भगवतः पाणिनेः संज्ञाः

पूर्णिमा
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

महर्षि पाणिनिः स्वव्याकरणतन्त्रे अष्टके अनेकसंज्ञाः कृतवान्। तासां संज्ञानां सूचि अत्र प्रदत्ता अस्ति।

संज्ञा - संहिता
सूत्रम्- परः सन्निकर्षः संहिता। 1/1/109
वृत्तिः - वर्णानामतिशयितः सन्निधिः संहिता संज्ञा स्यात्।

संज्ञा - संयोग
सूत्रम् - हलोऽनन्तराः संयोगः 11/1/7
वृत्तिः - अज्भिरव्यवहिता हलः संयोगसंज्ञाः स्युः ॥

संज्ञा - गुण
सूत्रम् - अदेङ् गुणः। 1/1/2
वृत्तिः - अत् एङ् च गुणसंज्ञः स्यात्।

संज्ञा - वृद्धि
सूत्रम्- वृद्धिरादैच्। 1/1/1
वृत्तिः- आदैच्च वृद्धिसंज्ञः स्यात् ॥

संज्ञा - प्रादिपदिक
सूत्रम् - अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्। 1/2/45
वृत्तिः - धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वा अर्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञं स्यात् ॥
सूत्रम्- कृत्तद्धितसमासाश्च। 1/2/46
वृत्तिः- कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च तथा स्युः ॥

संज्ञा - नदी
सूत्रम् - यू स्त्र्याख्यौ नदी। 1/4/3
वृत्तिः - ईदूदन्तौ नित्यस्त्रीलिङ्गौ नदीसंज्ञौ स्तः।

संज्ञा - घि
सूत्रम् - शेषो घ्यसखि। 1/4/7
वृत्तिः - ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्ते सखिवर्णं घिसेजम् ॥

संज्ञा - उपधा
सूत्रम् - अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा। 1/1/65
वृत्तिः - अन्त्यादलः पूर्वी वर्ण उपधासंज्ञः ॥

संज्ञा - अपृक्त
सूत्रम् - अपृक्त एकाल् प्रत्ययः। 1/2/41
वृत्तिः - एकाल् प्रत्ययो यः सोऽपृक्तसंज्ञः स्यात् ॥

संज्ञा - गति
सूत्रम् - गतिश्च। 1/4/60
वृत्तिः - प्रादयः क्रियायोगे गतिसंज्ञाः स्युः।

संज्ञा - पद
सूत्रम् - सुप्तिङन्तं पदम्। 1/4/14
वृत्तिः - सुबन्तं तिङन्तं च पदसंज्ञं स्यात् ॥

संज्ञा -विभाषा
सूत्रम् - न वेति विभाषा। 1/1/43
वृत्तिः - न, वा इति विभाषा।

संज्ञा - सवर्ण
सूत्रम् - तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्। 1/1/8
वृत्तिः - ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चेत्येद्द्वयं यस्य येन तुल्यं तन्मिथः सवर्णसंज्ञं स्यात्।

संज्ञा - टि
सूत्रम् - अचोऽन्त्यादि टि। 1/1/64
वृत्तिः - अचां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तद् टिसंज्ञं स्यात्।

संज्ञा - प्रगृह्य
सूत्रम् - ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्। 1/1/11
वृत्तिः - इंदूदेदन्ते द्विवचनं प्रगृह्यं स्यात्।

संज्ञा - सर्वनामस्थान
सूत्रम् - सुडनपुंसकस्य। 1/1/43
वृत्तिः- स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरक्लीवस्य।।
सूत्रम् - शि सर्वनामस्थानम्। 1/1/42
वृत्तिः - शि इत्येतदुक्तसंज्ञं स्यात् ॥

संज्ञा - भ
सूत्रम्- यचि भम्। 1/4/18
वृत्तिः-यादिष्वजादिषु च कप्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्व भसंज्ञं स्यात्।

संज्ञा - सर्वनाम
सूत्रम् - सर्वादीनि सर्वनामानि। 1/1/27
वृत्तिः - सर्वादीनि सर्वनामानि।

संज्ञा - निष्ठा
सूत्रम् - क्तक्तवतू निष्ठा। 1/1/26
वृत्तिः - एतौ निष्ठासंज्ञौ स्तः ॥

कोऽस्ति श्रीकृष्णः विभिन्नतत्त्वेषु

मनीषा कुमारी
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

भगवान् श्रीकृष्णः गीतायाः दशमे अध्याये कथयति -
हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे।। ७.१९

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च।।७.२०।।

अत्र वयं ज्ञास्यामः यत् श्रीकृष्णः किं कथितवान्!
जले - रसः "रसोऽहमप्सु कौन्तेय" (7.8)
चन्द्रसूर्ययोः - प्रकाशः "प्रभास्मि शशिसूर्ययोः" (7.8)

वेदेषु - ओंकारः
"प्रणवःसर्ववेदेषु" (7.8)

आकाशे - शब्दः "शब्दः खे" (7.8)
पुरुषेषु - पुरुषत्वं " पौरुषं नृषु" (7.8)
पृथ्व्याम् - गन्धः "पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च" (7.8)
अग्नौ - तेजः "तेजश्चास्मि विभावसौ" (7.8)
तपस्विषु - तपः "तपश्चास्मि तपस्विषु" (7.9)
सम्पूर्णभूतेषु - जीवनम् "जीवनं सर्वभूतेषु" (7.9)
बुद्धिमत्सु - बुद्धि "बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि" (7.10)
तेजस्विषु - तेजः "तेजश्चास्मि विभावसी" (7.8)
अदितिपुत्रेषु - विष्णुः "आदित्यानामहं विष्णुः " (10.21)
ज्योतिःसु - किरणवान् सूर्यः "ज्योतिषां रविरंशुमान् " (10.21)
नक्षत्रेषु - चन्द्रमा "नक्षत्राणामहं शशी" (10.21)
वेदेषु - सामवेदः "वेदानां सामवेदोऽस्मि" (10.22)
देवेषु - इन्द्रः "देवानामस्मि वासवः " (10.22)
इन्द्रियेषु - मनः " इन्द्रियाणां मनश्चास्मि" (10.22)
एकादशरुद्रेषु - शङ्करः " रुद्राणां शङ्कश्चास्मि" (10.23)
यक्षराक्षसयोः - कुबेरः "वित्तेशो यक्षरक्षसाम्" (10.23)
अष्टवसुषु - अग्निः "वसूनां पावकश्चास्मि " (10.23)
पर्वतेषु - सुमेरुः "मेरुः शिखरिणामहम् " (10.23)
पुरोहितेषु - बृहस्पतिः "पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् "(10.24)
सेनापतिषु - स्कन्दः "सेनानीनामहं स्कन्दः" (10.24)
जलाशयेषु - समुद्रः " सरसामस्मि सागरः" (10.24)
महर्षिषु - भृगुः " महर्षीणां भृगुरहम्" (10.25)
शब्देषु - अक्षर-ओंकारः "गिरामस्म्येकमक्षरम्" (10.25)
यज्ञेषु - जपयज्ञः "यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि" (10.25)
पर्वतेषु - हिमालयः "स्थावराणां हिमालयः " (10.25)
वृक्षेषु - पीपलः "अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम् " (10.26)
देवर्षिषु - नारदः " देवर्षीणां च नारदः " (10.26)
सिद्धेषु - कपिलः " सिद्धानां कपिलो मुनिः " (10.26)
गन्धर्वेषु - चित्ररथः "गन्धर्वाणां
चित्ररथः " (10.26)
अश्वेषु - उच्चैःश्रवा "उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् (10.27)
गजेषु - ऐरावतः " ऐरावतं गजेन्द्राणाम्"
मनुष्येषु - राजा " नराणां च नराधिपम्" (10.27)
शस्त्रेषु - वज्रम् " आयुधानामहं वज्रम्" (10.28)
गोषु - कामधेनुः " धेनुनामस्मि कामधुक्" (10.28)
सर्पेषु- वासुकिः " सर्पाणामस्मि वासुकिः" (10.28)
दैत्येषु - प्रहलादः " प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानाम् (10.30)
पशुषु - सिंहः "मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहम् " (10.30)
खगेषु - गरुड़ " वैनतेयश्च पक्षिणाम्" (10.30)
शस्त्रधारिषु - श्रीरामः " रामः शस्त्रभृतामहम् " (10.31)
मीनेषु - मगरः " झषाणां मकरश्चास्मि " (10.31)
नदिषु - भागीरथी गंगा " स्रोतसामस्मि जाह्नवी" (10.31)
विद्यासु - अध्यात्मविद्या" अध्यात्मविद्या विद्यानाम्" (10.32)
तर्केषु - वादः " वादः प्रवदतामहम् " (10.32)
अक्षरेषु - अकारः "अक्षराणामकारोऽस्मि" (10.33)
समासेषु - द्वन्द्वः "द्वन्द्वः सामासिकस्य च" (10.33)
छन्दसु - गायत्री " गायत्री छन्दसामहम् " (10.35)
मासेसु - मार्गशीर्षः " मासानां मार्गशीर्षोऽहम् (10.35)
ऋतुसु - वसन्तः " ऋतूनां कुसुमाकरः " (10.35)

अष्टाङ्गयोगस्य स्वरूपम्

श्रृङ्खला शुक्ला
स्नातकद्वितीयवर्षीया, संस्कृतविशेषः

१. योग-दर्शनानुसारम् ईश्वर-प्राप्तेरुपायः कः?
योगदर्शनानुसारं चित्तवृत्तीनां निरोधेन समाधिर्जायते, तस्मिन् समाधौ ईश्वरस्य साक्षात्कारो भवति।
२. ईश्वरस्य साक्षात्काराय योगदर्शने कः प्रधानो मार्गः?
अष्टाङ्गयोगः ईश्वरस्य साक्षात्काराय योगदर्शने प्रधानो मार्गः।
३. अष्टाङ्गयोगः अर्थात् किम्?
यस्मिन् योगस्य अष्टानाम् अङ्गानां निरूपणम् अस्ति, तादृशः योगः अष्टाङ्गयोग उच्यते।
४. योगस्य अष्टौ अङ्गानि कानि सन्ति?
योगस्य अष्टौ अङ्गानि इमानि सन्ति (१) यमः, (२) नियमः, (३) आसनम्, (४) प्राणायामः, (५) प्रत्याहारः, (६) धारणा, (७) ध्यानम्, (८) समाधिः च।
५. को नाम यमः?
मनसः, वाण्याः, कर्मणः च संयमनम् एव यमः। यमः पञ्चविधः अस्ति। अहिंसा, सत्यम्, अस्तेयम्, ब्रह्मचर्यम्, अपरिग्रहः च।
६. को नाम नियमः?
मनुष्येण स्वजीवने आरोपणीयाः श्रेष्ठा आचारा एव नियमाः। नियमाः पञ्च सन्ति शौचम्, सन्तोषः, तपः, स्वाध्यायः, ईश्वरप्रणिधानं च।
७. किं नाम आसनम्?
योग-सूत्रेषु उक्तं यत् "स्थिरसुखम् आसनम्"। दीर्घकालं यावद् यस्याम् अवस्थायां सुखेन स्थित्वा योगस्य अभ्यासः कर्तुं शक्यते, सा सुखावहा स्थितिः 'आसनम्' इति उच्यते। यथा पद्मासनं, भद्रासनं, स्वस्तिकासनं, दण्डासनम् इत्यादिकम्।
८. प्राणायामः कः?
योग-सूत्रेषु उक्तं, "तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः" इति। श्वास-प्रश्वासयोर्या सामान्या गतिर्भवति तस्याः विच्छेदः विशिष्ट प्रकारकं परिवर्तनम् एव 'प्राणायामः'।
९. प्रत्याहारः कः?
योग-सूत्रेषु उक्तं, "स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः" इति। यदा इन्द्रियाणि स्व-स्वविषयैः सह संयुक्तानि न भवन्ति, चित्त-स्वरूपम् एव अनुकुर्वन्ति, सा अवस्था 'प्रत्याहारः' इति कथ्यते।
१०. धारणा का भवति?
"देशबन्धश्चित्तस्य धारणा"। नाभि-चक्र, हृदय-पुण्डरीकम् इत्यादिषु स्थानेषु चित्तस्य वृत्तिमात्रेण यो बन्धो भवति, सा 'धारणा' इति उच्यते।
११. ध्यानं किं भवति?
"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्" इति योगसूत्रं वर्तते। सूत्रस्य अयम् आशयो यस्मिन् स्थाने धारणा दृढा भवति, तस्मिन् एव स्थाने यदा चित्तस्य ध्येयालम्बनस्य प्रत्ययस्य एकतानता सदृशः इतर-प्रत्ययाद् अपरामृष्टः प्रवाहः भवति तदा सः' ध्यानम्' इति उच्यते।
१२. समाधिः क उच्यते?
"तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः" इति योगसूत्रं वर्तते। अस्य अयम् आशयो यत्र विक्षेपान् परिहत्य मनः सम्यगाधीयते एकाग्रीक्रियते स समाधिः। ध्यानावस्थायां ध्यानकर्तुः ध्येयाकाररूपेण परिणामकारणात् तस्य शून्यावस्था भवति, सा अवस्था 'समाधिः' इति कथ्यते।

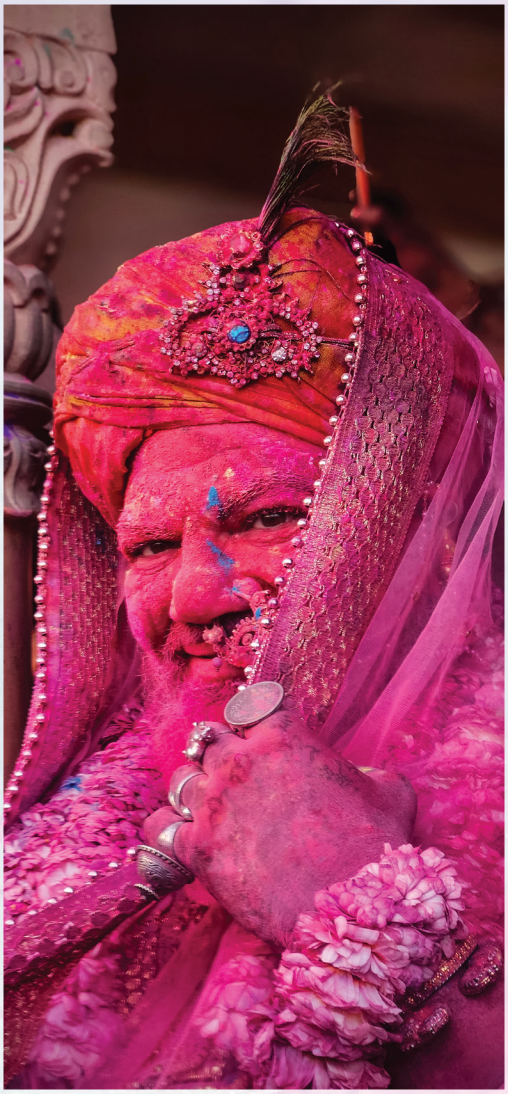

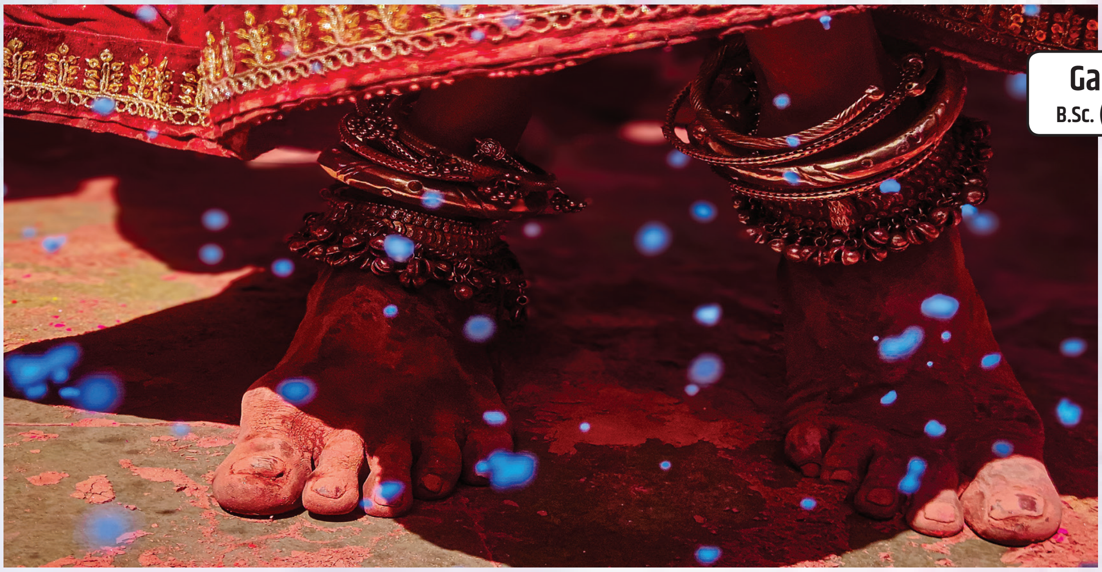

Ganesh Bansal
B.Sc. (Hons) Zoology III YR

Team Kalakriti